Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७६ वर्ष बाद पृथ्वी के निकट सौर मंडल के हमारे मेहमान

हेली का धूमकेतु

लाखों किलोमीटर प्रति-घण्टा वेग से चलने वाला, करोड़ों किलोमीटर लम्बी पूंछ वाला, अरबों टन का यह पुच्छल तारा मार्च-अप्रैल १९८६ ई० में पृथ्वी के निकट आ रहा है। जीवन में एक ही बार यह अवसर प्राप्त है। इस स्वर्णिम अवसर को हाथ से न जाने दें।

धर्मसन प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली–११०००६

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हेली धूमकेतु : चमत्कारी खगोलीय घटना

लगभग ७६ साल बाद इस समय आकाश में दिखाई दे रहे हेली के धूमकेतु को इस शताब्दी की एक बड़ी खगोलीय घटना कहा जा सकता है। अब तक खगोलविदों ने इसे देखकर कहा है कि यह बहुत चमकीला दिखाई दे रहा है तथा सबसे बड़ी बात यह है कि यह रोज दीख रहा है।

दिल्ली में २६ नवम्बर १९८५ को अन्तरराष्ट्रीय खगोल वैज्ञानिक संघ की १९वीं आम सभा के अवसर पर पत्रकारों के लिये हेली धूमकेतु पर एक प्रेस कान्फ्रेंस आयोजित की गई, जिसमें पत्रकारों ने अपने प्रश्न पूछे। अमेरिका, सोवियत रूस, जापान, फ्रांस तथा भारत के खगोलविद् मौजूद थे।

डॉ० राहे ने रहस्योद्घाटन किया कि हेली धूमकेतु का वजन १०० अरब टन है और यदि इस बार किसी ने नहीं देखा तो बात ७६ साल को गई। इस स्वर्णिम अवसर को हाथ से न जाने दिया जाए। दुनिया के हर कोने से देखने के लिये नक्शे जारी किये गये हैं और दिशा आदि के संकेत दिये गये हैं। यह बहुत चमकीला है। इसकी जांच-पड़ताल के लिये भेजे गये 'जोत्तो' अन्तरिक्ष यान ने २४ नवम्बर को इससे जैट धारा निकलते देखी।

सोवियत रूस के डॉ० यात्सकीव ने कहा कि उनके देश में २० वेधशालाएं धूमकेतु को देख रही हैं। सबसे बड़ी रूसी दूरबीनें इससे जानकारी ले रही हैं। यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के डॉ० बोनेट ने कहा कि अब तक 'जोत्तो' अंतरिक्ष-यान से बहुत अच्छे प्रयोग किये गये हैं। धूमकेतु से अंतरिक्ष-यान का 'मिलन' १३ मार्च को होगा।

जापान के डॉ० होडा ने कहा कि दो जापानी उपग्रहों से धूमकेतु के बारे में जो आंकड़े इकट्ठे किये जा रहे हैं उनसे काफी उत्साहवर्धक प्रयोग किये जा रहे हैं।

बंगलूर के भारतीय तारा-भौतिकी संस्थान के डॉ० के. आर. शिवरामन ने बताया कि भारतीय खगोलविदों ने धूमकेतु के चित्र लिये हैं। बंगलूर वेधशाला की २३० सेंटीमीटर व्यास की दूरबीन से लिये गये एक चित्र में दो तारे धूमकेतु के पथ पर दिखाई देते हैं। यह एक असाधारण चित्र है। भारत की स्थिति बढ़िया है, क्योंकि धूमकेतु को भारतीय भूमि से उत्तर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध की दोनों स्थितियों में देखा जा सकता है। भारत संसार को धूमकेतु के बारे में बहुत उपयोगी सूचनाएं दे सकता है।

धूमकेतु से प्रति सैकण्ड एक टन जल वाष्प आकाश में उड़ रहा है। धूमकेतु का कोई विनाशकारी प्रभाव पृथ्वी पर नहीं हो रहा, हमारी पृथ्वी ज्यों की त्यों रहेगी।

आवश्यक सूचना—यह पुस्तक सर्व साधारण के ज्ञानवर्धन के लिए छापी गई है इसलिए इसका कोई मूल्य नहीं रखा गया। इसके अतिरिक्त एक विशेष पुस्तक हेली धूमकेतु के विषय में श्री मार्तण्ड कार्यालय की ओर से भी छापी है। जिसमें ज्योतिष सम्बन्धी बहुत से विषयों पर, धूमकेतु के प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है। जिसका मूल्य १०) रु०, डाक खर्चा ३) रु० आप पेशगी भेजकर मंगा सकते हैं।

मिलने का पता—

बर्मसन प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-११०००६

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हैली धूमकेतु की धरती से भेंट

जीवन भर में केवल एक बार दिखाई देने वाला हेली धूमकेतु अब धरती के निकट पहुंच गया है। इस धूमकेतु का अध्ययन इस बार जोर-शोर से हो रहा है—धरती पर तथा अन्तरिक्ष में। इस समय पांच अन्तरिक्षयान सफर तय कर रहे हैं। वैज्ञानिकों को आशा है कि इस बार से ब्रह्मांड के बारे में विशेष जानकारी मिल सकेगी।

आकाश में धूमकेतु का प्रकट होना प्राचीन काल से ही एक सर्वाधिक आकर्षक घटना रही है। धूमकेतुओं का एकाएक प्रकट होना, आकाश में दूर तक इनकी लम्बी चमकीली पूंछ का फैल जाना और फिर कुछ दिनों या सप्ताहों के बाद इनका एकदम गायब हो जाना, लोगों के दिलों में भय और आतंक का संचार करता रहा है।

एडमंड हेली के समय से अब हम जानते हैं कि कौन-सा धूमकेतु किस कक्षा में सौर-मंडल की यात्रा करता है और कितने साल बाद पुनः प्रकट हो सकता है। वैज्ञानिक अब यह भी जानते हैं कि ये सौर-मंडल के सर्वाधिक पुरातन पिंड हैं। इनके केन्द्रीय नाभिक की संरचना में उस समय की भौतिकीय-रासायनिक परिस्थितियों की जानकारी मौजूद है, जब प्राथमिक सौर-नीहारिका (नैबुला) से सौर-मंडल के ग्रहों का सृजन हो रहा था। इसलिए इनके नाभिक की जानकारी में वैज्ञानिकों की बड़ी दिलचस्पी है। जानकारी प्राप्त करने में अनेक कठिनाइयां हैं। पहली बात तो यही है कि ग्रहों या उपग्रहों की तुलना में इनका नाभिक काफी छोटा होता है। हेली के धूमकेतु के नाभिक का व्यास १० किलोमीटर से अधिक नहीं है। धूमकेतु जब सूर्य से दो खगोलीय इकाइयों (सूर्य और पृथ्वी के बीच के करीब १५ करोड़ किलोमीटर के औसत अन्तर को खगोलीय इकाई कहते हैं) के अन्तर तक पहुंचता है, तभी सौरताप और सौरवायु के प्रभाव के कारण इसके नाभिक का धूलिकणों और बर्फराशि से निर्मित घनीभूत द्रव्य वाष्पित होकर गैसों में बदल जाता है। तब सूर्य की विपरीत दिशा में इन गैसों की एक लम्बी चमकीली पूंछ निकल आती है। जब धूमकेतु पूंछ रहित होता है, तब हम अत्यधिक दूरी के कारण इसका अवलोकन नहीं कर सकते। और, जब यह पृथ्वी के पास पहुंच जाता है, तब इसके सिर का हजारों किलोमीटर लम्बा-चौड़ा गैसीय घेरा इसके नाभिक को छिपा देता है। धरती से अब तक हम धूमकेतु के सिर और इसकी दुम की गैसों का ही थोड़ा-बहुत अन्वेषण कर पाए हैं। धूमकेतु के नाभिक को हम धरती से न देख सकते हैं न उसका अध्ययन कर सकते हैं।

परन्तु अब इस बार हमें हेली के धूमकेतु के नाभिक के 'दर्शन' हो जायेंगे। धरती से भेजे गए पांच स्वचालित अन्तरिक्षयान इसी उद्देश्य से हेली के धूमकेतु के पास पहुंच रहे हैं। यहां हम प्रमुख रूप से यही जानकारी देंगे कि ये अन्तरिक्षयान किस प्रकार हेली के धूमकेतु के पास पहुंच रहे हैं और ये यान धूमकेतु के सिर में प्रवेश करके किस प्रकार अपने उपकरणों से धूमकेतु के नाभिक का अन्वेषण करेंगे।

हेली के ऐतिहासिक धूमकेतु को पिछले करीब ढाई हजार वर्षों से देखा जा रहा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है। खगोलविद इसके यात्रापथ को अच्छी तरह जानते हैं। हाल में इस के दिन-प्रति-दिन के मार्ग, वेग, कांति आदि के बारे में कम्प्यूटर की सहायता से सूक्ष्म सारणियां भी तैयार की गई हैं। धरती से भेजे गये अन्तरिक्षयानों को इस के समीप ले जाने में इस विवरण का बड़ा उपयोग होगा। बिएला के धूमकेतु की तरह हेली के धूमकेतु के एकाएक नष्ट हो जाने की भी कोई सम्भावना नहीं है। इसीलिये काफी धन खर्च करके तैयार किए गए यानों को हेली के धूमकेतु के पास भेजने की जोखिम उठाई गई है। सबसे पहले दिसम्बर, १९८४ में सोवियत संघ ने अपने दो अन्तरिक्षयान हेली के धूमकेतु की ओर रवाना कर दिए थे। ये सोवियत यान हेली का धूमकेतु और शुक्र ग्रह (वीनस), दोनों का अध्ययन करने के लिए बनाए गये हैं। इसलिए इन सोवियत यानों को वीनस-हेली (संक्षेप में, वी हे) नाम दिया गया है। रूसी भाषा में हेली का उच्चारण गाल्ली होता है, इसलिए इन सोवियत यानों को वेगा (या वेहा) भी कहा जाता है। सोवियत संघ अपने जिन अन्तरिक्षयानों को शुक्र ग्रह पर भेजता रहा है, उन्हीं को विकसित करके ये दो वीहे यान तैयार किए गए हैं।

हेली स्मृति-पदक

इन सोवियत यानों को जब धरती से रवाना किया गया था, तब हेली का धूमकेतु पृथ्वी से अभी बहुत दूर था। सोवियत यान करीब छह महीनों में सूर्य का आधा चक्कर लगाने के बाद जून, १९८५ में शुक्र ग्रह के पास पहुंचे। वहां उन्होंने शुक्र के वायुमंडल में यंत्र-उपकरणों के पिटारे छोड़े। वायुमण्डल से शुक्र की सतह पर पहुंचने तक इस उपकरणों से बड़ी महत्व की जानकारी प्राप्त हुई है।

शुक्र के वायुमण्डल में यन्त्र-उपकरण उतारने के बाद दोनों सोवियत यान हेली के धूमकेतु से मिलने आगे बढ़ गये हैं। आगे उन्हें सूर्य का लगभग एक पूरा चक्कर लगाना है। इस बीच हेली का धूमकेतु अब पृथ्वी की कक्षा के भीतर पहुंच गया है। २७ नवम्बर, १९८५ को पृथ्वी और धूमकेतु के बीच पहली बार न्यूनतम दूरी थी। ९ फरवरी, १९८६ को धूमकेतु और सूर्य के बीच न्यूनतम दूरी रहेगी। उसके बाद हेली के धूमकेतु की वापसी यात्रा के दौरान ११ अप्रैल, १९८६ को पुनः धूमकेतु और पृथ्वी के बीच न्यूनतम दूरी रहेगी। वापसी यात्रा के दौरान ही मार्च '८६ के दूसरे सप्ताह में सोवियत यान सामने से हेली के धूमकेतु के पास पहुंचेंगे। यूरोपीय अन्तरिक्ष एजेंसी का जोत्तो यान और जापान के दो यान भी उसी समय इस के पास पहुंचेंगे।

हेली से यानों का मिलन

क्या कारण है कि धरती से भेजे गये सभी अन्तरिक्षयान मार्च के दूसरे सप्ताह में इस धूमकेतु के पास पहुंचेंगे? इसका एक महत्वपूर्ण कारण है। हेली के धूमकेतु की कक्षा ग्रहों के समतल के साथ करीब १६२ अंशों का कोण बनाती है। इसलिए सूर्य के पास पहुंचने पर यह धूमकेतु दो बार ग्रहों के समतल को काटता है। सूर्य के समीप आते समय यह अब एक बार इस समतल को काटकर ऊपर पहुंच गया है। सूर्य की परिक्रमा करने के बाद यह पुनः मार्च के दूसरे सप्ताह में इस समतल को काटेगा और नीचे पहुंचकर सुदूर की अपनी यात्रा में आगे बढ़ेगा।

अन्तरिक्षयानों को ग्रहों के समतल में ही सुविधा से प्रक्षेपित किया जा सकता है। इस प्रयास में ऊर्जा भी कम खर्च होती है। यान को ग्रहों के समतल के ऊपर या नीचे भेजने में अनेक झमेले हैं, और इनके यात्रापथों में संशोधन करने में भी बड़ी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दिक्कत होती है। यही कारण है कि धरती से भेजे गए अंतरिक्षयान मार्च के दूसरे सप्ताह में उस समय इस धूमकेतु के पास पहुंचेंगे, जब यह दूसरी बार ग्रहों के समतल में पहुंच जाएगा। उस समय धूमकेतु और यानों का जब आमने-सामने मिलन होगा, तब इनका सापेक्ष वेग करीब ७० किलोमीटर प्रति सेकण्ड रहेगा।

सोवियत **वीहे** यान धूमकेतु के सिर में प्रवेश करके इसके नाभिक से करीब १०,००० किलोमीटर के अन्तर पर पहुंच जाएंगे। सोवियत वीहे-१ यान ही सर्वप्रथम ६ मार्च, १९८६ को इस धूमकेतु के पास पहुंचेगा। ९ मार्च को वीहे-२ यान इस धूमकेतु के कुछ और अधिक नजदीक पहुंच जाएगा। दोनों सोवियत यानों में धूमकेतु के अध्ययन के लिए टेलीविजन कैमरे, वर्णक्रममापी, अवरक्त वर्णक्रममापी तथा धूलिकण, गैसीय कण, आवेशी कण, प्लाज्मा आदि के अन्वेषण के लिए यन्त्र-उपकरण स्थापित किए गए हैं। इन उपकरणों से प्राप्त की गई तमाम जानकारी उसी समय धरती पर प्राप्त हो जाएगी।

हेली मिशन में सहयोग

यूरोपीय अंतरिक्ष एजेन्सी के **जोत्तो** अन्तरिक्षयान को शक्तिशाली **एरियानी** राकेट से फ्रेन्च-गुयाना के **कौरोऊ** अन्तरिक्ष अड्डे से जुलाई, १९८५ में अन्तरिक्ष में छोड़ा गया था। यह यान सूर्य की करीब तीन-चौथाई परिक्रमा करने के बाद सामने से १३ मार्च, १९८६ को धूमकेतु के सिर में प्रवेश करके इसके नाभिक के करीब २०० किलोमीटर नजदीक पहुंच सकता है। चूंकि सोवियत वीहे यान जोत्तो के पहले धूमकेतु के पास पहुंचेंगे, इसलिए उनके द्वारा प्रेषित चित्र **जोत्तो** को धूमकेतु के नाभिक के अधिकाधिक नजदीक पहुंचा देने में योग देंगे।

५८ किलोग्राम भार के इस जोत्तो यान में दस प्रकार के प्रयोगों के लिए वैज्ञानिक उपकरण स्थापित किये गए हैं। इनमें सर्वाधिक महत्त्व का उपकरण है एक बहुरंगी कैमरा, जो नजदीक से धूमकेतु के नाभिक के चित्र उतारेगा। करीब २५० दिनों तक अन्तरिक्ष की यात्रा करने के बाद १३ मार्च, १९८६ को जब जोत्तो यान धूमकेतु के पास पहुंचेगा तो यह केवल चार घण्टे तक ही इसका अध्ययन कर पाएगा। इन चार घण्टों में यान के उपकरण धूमकेतु की धूल तथा गैस का विश्लेषण करेंगे और तमाम जानकारी उसी समय पृथ्वी की ओर भेज देंगे। इस बात की काफी सम्भावना है कि जोत्तो जब नाभिक के काफी नजदीक पहुंचेगा तो धूलिकणों के प्रहार से यह यान नष्ट हो जाएगा। जोत्तो द्वारा भेजी गई जानकारी को प्राप्त करने के लिए समूचे धरातल पर रेडियो-दूरबीनों और एंटेनाओं के जाल की व्यवस्था की गई है।

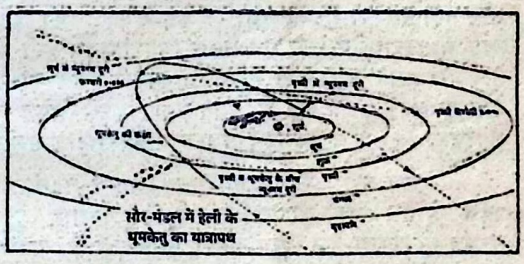

सनसनीखेज मिलन

जोत्तो यान की खास बात है, इसे धूमकेतु के नाभिक के २०० किलोमीटर नजदीक तक पहुंचाने की व्यवस्था। जुलाई में जब इस यान को धरती से रवाना किया गया था तो धूमकेतु के नाभिक की स्थिति ३०,००० कि. मी. अन्तर के अन्दाज से ही ज्ञात थी। लेकिन अब धूमकेतु के नाभिक की स्थिति की बड़ी सूक्ष्मता से गणना की जा रही है, और

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तदनुसार जोत्तो के यात्रापथ में संशोधन किया जा रहा है। मार्च, १९८६ तक जोत्तो और धूमकेतु के नाभिक के बीच के अन्तर की अनिश्चितता केवल ६०० कि. मी. रह जाएगी। वेहे-१ और वेहे-२ से प्राप्त होने वाले चित्रों के आधार पर मार्च के दूसरे सप्ताह में यह अनिश्चितता और कम हो जाएगी और जोत्तो को धमकेतु के नाभिक के काफी नजदीक पहुंचा देना संभव हो जाएगा। इस प्रकार जोत्तो और हेली के धूमकेतु का यह मिलन बड़ा सनसनीखेज रहेगा। मार्च, १९८६ में हमें पहली बार धूमकेतु के नाभिक के टी. वी. चित्र देखने को मिलेंगे।

जापान ने हेली के धूमकेतु की ओर दो अन्तरिक्षयान भेजे हैं। साकीगाके (अग्रदूत) जनवरी, १९८५ में छोड़ा गया था और दूसरा ग्रह-ए अगस्त में। ये दोनों यान मार्च, ८६ में धूमकेतु के नाभिक के १०,००० से १,००,००० कि. मी. नजदीक तक पहुंचेंगे। इन यानों में स्थापित उपकरण धूमकेतु के हाइड्रोजन तथा प्लाज्मा का और इन पर सौर वायु के प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

अमेरिका ने हेली के धूमकेतु के अध्ययन के लिए कोई स्वतंत्र अन्तरिक्षयान नहीं बनाया है, परन्तु नासा द्वारा काफी पहले छोड़े गये आई.सी.ई. (इंटरनेशनल कॉमेटरी एक्सप्लोरर) अन्तरिक्षयान का हेली के अंवेषण में भी उपयोग होगा। यह यान पिछले सितम्बर महीने में जियाकोबिनीजिन्नेर धूमकेतु की पूंछ में से होकर गुजरा था। अब यह अमेरिकी यान हेली के धूमकेतु की ओर आगे बढ़ रहा है।

रहस्य खुलेंगे

इन अन्तरिक्षयानों से इस बार हमें हेली के धूमकेतु के बारे में निश्चय ही काफी नई जानकारी मिलेगी। इस के नाभिक की रचना तथा इसकी सतह से उत्सर्जित होने वाली गैसों और धूलिकणों के बारे में भी काफी ठोस जानकारी मिलेगी। धरातल से भी हेली के धूमकेतु का व्यापक अध्ययन अब शुरू हो गया है। हमारे देश की कवलूर, हैदराबाद और नैनीताल की वेधशालाओं से इस धूमकेतु का अध्ययन होगा। हेली के अध्ययन के लिए अन्तरराष्ट्रीय हेली अवलोकन (इंटरनेशनल हेली वाच) नामक संगठन स्थापित हुआ है, और इसके माध्यम से सारी जानकारी एकत्र की जाएगी। धरातल और अन्तरिक्ष से हेली के धूमकेतु के बारे में जितनी जानकारी प्राप्त होगी, उस पर विचार करने के लिए अक्टूबर, १९८६ में हैडलबर्ग में एक अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है।

आज धरती से भेजे गये अन्तरिक्षयान पहली बार एक ऐतिहासिक धूमकेतु के पास पहुंच रहे हैं। आगे जाकर किसी धूमकेतु के साथ सुदूर सौर-मण्डल की यात्रा करना भी सम्भव हो सकता है। आगे जाकर धूमकेतुओं के यात्रापथ में इच्छित रद्दोबदल करना भी सम्भव हो सकता है। धूमकेतु के नाभिक को थोड़ा धक्का दिया जाये, तो उसका मार्ग बदल सकता है।

हेली के धूमकेतु से पहली बार यह सिद्ध हुआ था कि यह एक सुनिश्चित हेली कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करते हैं। के धूमकेतु की कक्षा ने न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम की प्रामाणिकता के लिए पहला प्रमाण पेश किया था। अब हेली का यही धूमकेतु हमें अपने अंतरंग की पहली बार जानकारी देने जा रहा है। इस धूमकेतु की हर बार की सूर्य-परिक्रमा में इसका काफी द्रव्य गैसों व धूल के रूप में अन्तरिक्ष में उड़ जाता है। फिर भी वैज्ञानिक हमें जानकारी देते हैं कि आगे की ४० सूर्य-परिक्रमाओं के लिए इसमें पर्याप्त द्रव्यराशि है। आगे हर परिक्रमा में इस धूमकेतु की चमक कम होती जायेगी। आगे कोई दूसरा धूमकेतु हेली के धूमकेतु का स्थान ले लेगा। परन्तु हेली का धूमकेतु मानव-इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हेली : आकाश में कब-कहां

हेली का धूमकेतु पृथ्वी की कक्षा के दायरे में पहुंच गया है, और अब आकाश में हम इसके दर्शन कर सकते हैं। २७ नवम्बर को पृथ्वी और इस के बीच न्यूनतम दूरी थी। सूर्य का चक्कर लगाने के बाद जब यह अपनी वापसी यात्रा आरम्भ कर देगा, तब ११ अप्रैल, १९८६ को पुनः पृथ्वी और केतु के बीच न्यूनतम दूरी रहेगी। बीच की इस अवधि में कई अवसर आयेंगे जब दक्षिणी आकाश में क्षितिज के कुछ ऊपर, सूर्योदय के पहले या सूर्यास्त के बाद, इस धूमकेतु को हम बाइनेक्यूलर से या कोरी आंखों से देख सकेंगे। नवम्बर महीने में हेली का धूमकेतु वृषभ राशि में रोहिणी नक्षत्र और कृत्तिका तारा-गुच्छ के बीच में यात्रा कर रहा था। तब मध्यरात्रि के समय बहुतों ने बाइनेक्यूलर या छोटी दूरबीन से इसे देखा है। इस समय धूमकेतु और पृथ्वी के बीच दूरी बढ़ती जा रही है। यह केतु सूर्य का चक्कर लगाने आगे बढ़ रहा है, तो पृथ्वी विपरीत दिशा में अपनी कक्षा में आगे बढ़ रही है।

इस बार हेली के धूमकेतु का यात्रा पथ कुछ इस प्रकार है कि इसे दक्षिणी गोलार्द्ध के स्थानों से ही सिर के ऊपर आकाश में देखा जा सकता है। यूरोप या उत्तरी अमेरिका के स्थानों से इसे अल्पावधि के लिये क्षितिज के पास ही देखा जा सकता है। दक्षिण भारत या श्रीलंका से देखने पर दक्षिणी आकाश में क्षितिज से इसकी ऊंचाई कुछ अधिक रहेगी, पर उत्तरी भारत के स्थानों से इसे सूर्योदय के पहले या सूर्यास्त के बाद दक्षिणी आकाश में क्षितिज के थोड़े ऊपर ही देख पाना सम्भव होगा। फरवरी में इसे देख पाना सम्भव नहीं होगा। परन्तु मार्च '८६ के आरम्भ से इसे हम सूर्योदय के पहले पूर्वी क्षितिज से शनैः शनैः ऊपर उठता देख सकते हैं। उस समय इसका सिर नीचे क्षितिज की ओर रहेगा और पूंछ ऊपर की ओर। उस समय पृथ्वी से यह काफी दूर रहेगा, इसलिये बाइनेक्यूलर से ही इसे देख पाना सम्भव होगा।

मार्च के आरम्भ से अप्रैल की मध्यावधि तक यह धूमकेतु हमे दक्षिणी आकाश में क्षितिज के ऊपर पूरब से पश्चिम तक एक अर्द्धवृत्ति में यात्रा करता हुआ नजर आएगा। धरती से भेजे गए पांच अन्तरिक्षयान मार्च के दूसरे सप्ताह में ही हेली के धूमकेतु के पास पहुंच रहे हैं। ११ अप्रैल, १९८६ को धूमकेतु और पृथ्वी के बीच पुनः न्यूनतम दूरी रहेगी। उस दिन यह पृथ्वी से करीब ६ करोड़ ३० लाख किलोमीटर दूर रहेगा। फिर भी उस दौरान अपने देश से इसे हम देख नहीं पाएंगे।

अप्रैल के दूसरे पखवाड़े में हमें यह धूमकेतु पूर्व और दक्षिण के बीच के आकाश में सूर्यास्त के बाद शनैः शनैः क्षितिज से अधिकाधिक ऊपर उठता दिखाई देगा। उस समय इसे छोटी दूरबीन या बाइनेक्यूलर से ही देखा जा सकेगा। चूंकि ११ अप्रैल, '८६ के बाद पृथ्वी और इस के बीच दूरी निरन्तर बढ़ती जायेगी और यह अपनी वापसी यात्रा में आगे बढ़ता जाएगा, इसलिए अप्रैल के बाद इसे बड़ी दूरबीनों से ही देख पाना सम्भव होगा। इस बार एक शक्तिशाली दूरबीन से अक्टूबर, १९८२ में ही शनि की कक्षा के परे हेली के धूमकेतु को खोज लिया गया था। इसकी वापसी यात्रा में भी शनि की कक्षा तक इसका पीछा किया जाएगा। यह भी सम्भव है कि फोटान संवेदकों से नेपच्यून तथा प्लूटो की कक्षाओं के बीच की इसकी महत्तम दूरी तक इस पर नजर रखी जायेगी। तब तो २०६१-६२ ई. में पुनः इसकी वापसी तक खगोलविदों को इसकी सतत् जानकारी रहेगी, और इसे पुनः खोज निकालने का प्रश्न ही नहीं उठेगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हेली धूमकेतु : एक नजर में

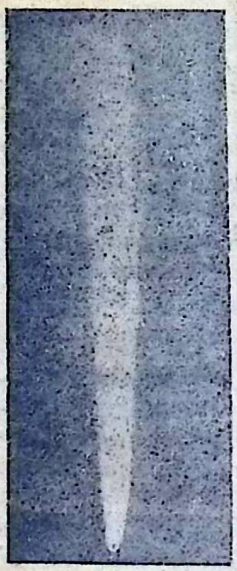

द्रव्यराशि : करीब १९ अरब टन।

नाभिक का व्यास : करीब १० किलोमीटर।

सूर्य-परिक्रमा का काल : करीब ७६ साल।

कक्षा का झुकाव : लगभग १६२ अंश।

पृथ्वी से न्यूनतम दूरी : २७ नवम्बर, १९८५ और ११ अप्रैल, १९८६।

सूर्य से न्यूनतम दूरी : ९ फरवरी, १९८६।

धरती से भेजे गए यान इसके पास पहुंचेंगे : मार्च '८६ के दूसरे सप्ताह में।

अगली बार पुनः प्रकट होगा : २०६१-६२ ई.।

क्या धूमकेतु पृथ्वी से टकरा सकते हैं ?

पुराने जमाने के लोगों के लिए धूमकेतु ऐसे पिंड थे जो एकाएक प्रकट होते थे, उनकी चमकीली पूंछ आकाश में लम्बी दूरी तक फैल जाती थी, उनका डरावना नजारा कई दिनों तक कायम रहता था और फिर अचानक गायब हो जाता था। आकाश की यह अप्रत्याशित घटना सबको आतंकित कर देती थी। लोग सोचते थे, 'पुच्छल तारा' यदि धरती पर आ गिरे तो संसार का सर्वनाश हो जाएगा ! भयाक्रांत जनमानस की इस भावना का लाभ उठा कर फलित-ज्योतिषियों ने भी धूमकेतुओं के शुभाशुभ फल भाखने शुरू कर दिए धूमकेतु राजा से लेकर रंक तक, सभी के लिए महाविनाश के सूचक बन गए। वाराह-मिहिर (छठी सदी) ने अपनी बृहत्संहिता में यहां तक लिखा है कि केतु के प्रकट होने के तीन सप्ताह बाद इसके अनिष्टकारी प्रभाव शुरू हो जाते हैं और उतने महीनों या सालों तक कायम रहते हैं, जितने दिनों या महीनों तक वह केतु दिखाई देता है।

हेली के धूमकेतु की प्रसिद्धि सिर्फ इसके व्यापक वैज्ञानिक अध्ययन के कारण ही नहीं है; इतिहास से हमें जानकारी मिलती है कि अनेक अवसरों के इसके 'दर्शन' के साथ विनाशक या अशुभ घटनाएं जुड़ी हुई हैं। हेली के धूमकेतु की स्मृति दुनिया के पिछले करीब ढाई हजार वर्षों के इतिहास में पत्थर की लकीर की तरह अंकित है। हेली के धूमकेतु के बारे में सबसे प्राचीन उल्लेख चीनी इतिहास-ग्रन्थों में मिलते हैं। जानकारी मिलती है कि ६१३ ई. पूर्व में ७वें महीने में सप्तर्षि-मण्डल में इस धूमकेतु को चीनवासियों ने देखा था। चीन के ज्योतिषियों ने ४३७ ई. पूर्व और १२ ई. पूर्व में इसके दिखाई देने के बारे में विस्तृत जान-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कारी दी है। चीनी ज्योतिषियों ने धूमकेतुओं के यात्रा पथों, सिरों तथा पूंछों के बारे में जो सूक्ष्म जानकारी लिख छोड़ी है, वह आज ऐतिहासिक अन्वेषण के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध हो रही है।

प्राचीन बेबीलोनी कीलाक्षर-अभिलेखों के हाल के अन्वेषणों से पता चला है कि खल्दिया के ज्योतिषियों ने भी १६५ ई. पूर्व और ८७ ई. पूर्व में इस धूमकेतु को देखा था।

अथर्वसंहिता में धूमकेतु का उल्लेख तो है, पर वैदिक वाङ्मय में हमें इनके बारे में कोई स्पष्ट विवरण नहीं मिलता। वराहमिहिर ने अपनी बृहत्संहिता के केतुचार अध्याय में धूमकेतुओं के कपालकेतु, जलकेतु, भवकेतु, रश्मिकेतु, ध्रुवकेतु आदि अनेक नाम गिनाए हैं, पर इनके बारे में कोई स्पष्ट वैज्ञानिक जानकारी नहीं दी है।

यूरोप से हेली के धूमकेतु के बारे में अनेक प्राचीन उल्लेख मिलते हैं। ८३७ ई. में यह धूमकेतु पृथ्वी के काफी नजदीक पहुंच गया था। तब यह सर्वाधिक चमकीला नजर आया था, और इसके प्रकटीकरण को लुई-प्रथम की मृत्यु का सूचक समझा गया था। १०६६ ई. में जब यह हेस्टिंग्स के युद्ध के समय दिखाई दिया था, तो राजा हेरोल्ड ने इसे भयावह संकट का सूचक मान लिया था। उस समय के इस धूमकेतु के नजारे को बायुस नामक एक प्रसिद्ध चित्रपट में अंकित किया गया है। हेली के धूमकेतु का यह सर्वाधिक प्राचीन चित्रांकन है।

१३०१ ई. में जब यह धूमकेतु प्रकट हुआ था, तो इटली के प्रसिद्ध चित्रकार जोत्तो दि बोन्दोनी ने इसे बेथलहेम के तारे के रूप में चित्रांकित किया था। अब हेली के धूमकेतु के पास पहुंच रहे यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के यान को जोत्तो नाम इसीलिए दिया गया है। एडमंड हेली (१६५६-१७४२) ने १६८२ में इस धूमकेतु को देखा, जाना कि १५३१ तथा १६०७ में भी यही धूमकेतु प्रकट हुआ था, न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम से इसकी कक्षा निर्धारण की और अन्त में भविष्यवाणी कर दी कि १७५८ में यही धूमकेतु पुनः प्रकट होगा, और ठीक वैसा ही हुआ, तब से धूमकेतुओं की कक्षाएं निर्धारित करना सम्भव हुआ। फिर भी, धूमकेतुओं का भय और आतंक समाप्त नहीं हुआ।

१७७३ का फ्रांस का किस्सा है। फ्रांस के प्रख्यात खगोलविद लालन्दे को पेरिस की विज्ञान अकादमी में एक निबन्ध पढ़ना था—धूमकेतु जो पृथ्वी के समीप पहुंच सकते हैं। बस, इतने से ही समूचे फ्रांस में धूमकेतु के आगमन की अफवाह फैल गई। लोग एक-दूसरे को बताने लगे कि लालन्दे की गणना के अनुसार २० या २१ मई १७७३ को एक धूमकेतु पृथ्वी के मार्ग को काटेगा, धरती से टकरा जाएगा और दुनिया समाप्त हो जाएगी! लालन्दे ने फ्रांस के गजट में सूचना भी छपवाई कि उस दिन धूमकेतु के प्रकट होने की कोई संभावना नहीं है, फिर भी आतंक और भय बरकरार रहा। ईसाई धर्मगुरुओं ने भी मौके का लाभ उठाने के इरादे से, स्वर्ग में स्थान सरक्षित करवाने के लिये लोगों को भारी कीमत पर टिकटें बेचने का धन्धा शुरू कर दिया?

बिएला धूमकेतु का १८३२ का किस्सा बड़ा दिलचस्प है। वैज्ञानिकों ने जानकारी दी थी कि उस साल २९ अक्टूबर को यह धमकेतु पृथ्वी की कक्षा को काटेगा। फिर क्या था, यूरोप की जनता में भयंकर आतक फैल गया। समाचारपत्रों में जब अतिरंजित खबरें छपीं कि यह धूमकेतु यदि धरती से टकरा जाता है तो प्रलय हो जाएगी, जनता भयाक्रांत हो उठी। उस समय के फ्रांसीसी खगोलविद अरागो ने खूब समझाया कि धूमकेतु पृथ्वी की कक्षा के समीप पहुंचने पर भी धरती से आठ करोड़ किलोमीटर दूर रहेगा, और

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

करीब एक महीने बाद ही पृथ्वी अपनी कक्षा के उस स्थान पर पहुंचेगी, फिर भी आतंक में कोई कमी नहीं आई।

बीसवीं सदी में पहुंचने पर भी धूमकेतुओं का भय समाप्त नहीं हुआ। पिछली बार १९१०. में जब हेली का धूमकेतु प्रकट हुआ था, तो काफी आतंक फैला था। खगोलविदों ने जानकारी दी थी कि इस बार पृथ्वी से हेली के धूमकेतु की पूंछ में से गुजरेगी। वैज्ञानिकों ने यह भी बताया था कि इस की पूंछ में **मोनोक्साइड** और **साइनोजन**—जैसी जहरीली गैसें होती हैं। इससे और भी अधिक आतंक फैल गया। जहरीली गैसों से बचने के लिये तेहरान में कई लोगों ने तहखाने खोद लिए! इस अवसर का लाभ उठाने के इरादे से अमेरिका के कुछ व्यवसायियों ने नकली गैस-प्रतिरोधी गोलियां और गैस-मास्क बेचने का धन्धा शुरू कर दिया! लेकिन कहीं कुछ भी नहीं हुआ। धूमकेतु की अतिविरल गैसें धरती के घने वायुमंडल के कवच को पार करके धरातल पर नहीं पहुंच सकतीं।

इस बार वराहमिहिर के मानसपुत्र तो आतंक फैलाने में शायद सफल नहीं होंगे, परन्तु लगता है कि वैज्ञानिकों के कुछ मंतव्य इस बार भी सनसनी फैला सकते हैं। प्रसिद्ध खगोलविद **फ्रेड हॉयल** और **चन्द्र विक्रमसिंघे** का मत है (वस्तुतः यह परिकल्पना पुरानी है) कि जीवन का उद्भव धरती पर होना सम्भव नहीं है, धरती पर जीवाणुओं का आगमन बाह्य अन्तरिक्ष से धूमकेतुओं के जरिए हुआ है। अतः कहा जा सकता है कि धूमकेतु अब भी धरती के वायुमंडल में जीवाणुओं तथा विषाणुओं का छितराव करते रहते हैं। अन्य शब्दों में बाह्य अन्तरिक्ष के ये जीवाणु और विषाणु धरती पर महारोग फैलाते हैं। फ्रेड हॉयल के भारतीय शिष्य जयन्त नारलीकर ने अपने गुरु के मत की पुष्टि के लिए धूमकेतुओं और महामारियों के संयोग के सबूत खोजने का काम भी शुरू कर दिया है। नारलीकर ने १९१० में बम्बई में फैली प्लेग की महामारी का सम्बन्ध उस साल प्रकट हुए हेली के धूमकेतु के साथ जोड़ा है।

किसी धूमकेतु के धरती से टकरा जाने की सम्भावना 'नहीं के बराबर' है। फिर भी, यकीन के साथ नहीं कहा जा सकता कि कभी कोई धूमकेतु धरती से टकरायेगा ही नहीं। पृथ्वी के पिछले करीब पांच अरब साल के लम्बे इतिहास में करीब ५० धूमकेतु धरती से आ टकराये होंगे। **लोणार** (महाराष्ट्र), **तुंगुस्का** (साइबेरिया) तथा **अरिजोना** (अमेरिका) के विशाल खड्ड सम्भवतः छोटे-मोटे धूमकेतुओं या उल्का-प्रस्तरों के धरती से टकरा जाने के कारण ही बने हैं। धूमकेतुओं के इस खतरे से भी कहीं अधिक खतरनाक साधन अब स्वयं आदमी ने धरती पर ही जुटा लिये हैं। एक नाभिकीय अस्त्र धूमकेतु के टकराव से कहीं अधिक विनाश कर सकता है। और, अब तो धरती की तबाही के साधन अन्तरिक्ष में भी स्थापित किये जा रहे हैं। अब तो लगता है कि धरती का विनाश अन्तरिक्ष के किसी पिंड से नहीं, बल्कि आदमी की अपनी करतूतों से ही होगा!

क्या धरती पर जीवन का बीज धूमकेतुओं ने बिखेरा था?

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति यहीं पर हुई या जीवन बाहर से आया, यह अब बड़ा ही विवादास्पद विषय बन चुका है। जब-जब धरती के निकट धूमकेतुओं के दर्शन होते हैं, यह चर्चा आम हो जाती है। धरती पर ही जीवन की उत्पत्ति हुई, ऐसा मानने वाले वैज्ञानिक कहते हैं कि अरबों वर्ष पहले महाविस्फोट होने से पदार्थ अन्तरिक्ष में बिखरा। पदार्थ घनीभूत होने से अनेक पिंड बन। इसी तरह हमारी धरती भी अस्तित्व में आई।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

धरती जब ठण्डी हो रही थी तो इस पर भी विस्फोट होते रहे, ज्वालामुखी फटते रहे, बिजलियां कड़कती रहीं, लावा उबलता रहा। फिर अनेक रासायनिक क्रियाएं हुईं और धरती के वातावरण में पहले से विद्यमान स्वतन्त्र तत्त्वों ने मिलकर मीथेन, कार्बन-मोनोआक्साइड, अमोनिया आदि के पहले से थोड़े जटिल संरचना के अणुओं का जन्म हुआ। बाद में और परिवर्तन होने से धरती पर पानी आया। तब प्रथम जैव पदार्थ (आरगैनिक मैटर) की उत्पत्ति हुई। कुछ समय बाद आरगैनिक मैटर और अमीनो अम्ल न्युक्लिक अम्ल में बदल गया। फिर सूत्रपात हुआ डी. एन. ए. और आर. एन. ए. का। ये ही वे नाभिक अम्ल हैं जो जीवन-निर्माण की मूल इकाइयां हैं। इनसे ही जीवनसूत्र का निर्माण होता है। जीवन की यह कुंजी कोशिका के नाभिक में सुरक्षित पड़ी रहती है।

इसी बात पर वैज्ञानिक बहस है कि जीवन की शुरूआत करने वाले पहले नाभिक अम्ल धरती पर उत्पन्न परिस्थितियों की वजह से अपने-आप बनते चले गए अथवा धूमकेतुओं के सम्पर्क में आने पर ऐसा हुआ।

धरती का जन्म

धरती पर जीवन उत्पत्ति के बारे में वैज्ञानिकों ने लगभग आधा दर्जन तरीके तो खोज ही लिए हैं। धरती के जन्म के समय ब्रह्माण्ड में आज दिखाई देने वाले धूमकेतुओं से कहीं ज्यादा संख्या में थे। इनमें से अनेक धरती से टकराए होंगे। तब क्या यह सम्भव नहीं कि धरती का प्रारम्भिक वातावरण तैयार करने में धूमकेतुओं ने प्रमुख भूमिका निभाई हो। धरती के वातावरण में प्रविष्ट होते समय धूमकेतु वाष्पीकृत हुए, जिसकी बदौलत वातावरण में कुछ गैसें उत्पन्न हुईं। ऐसे ही वक्त मीथेन, कार्बन-मोनोआक्साइड और हाइड्रोजन साइनाइड की उत्पत्ति हो गई हो, ऐसा वैज्ञानिक मानते हैं।

धूमकेतु का नाभिक कुछ कि. मी. व्यास का कथित रूप से जमी हिम का पिंड माना गया है। नाभिक में मिथाइल साइनाइड और हाइड्रोजन साइनाइड-जैसे जटिल आर्गेनिक अणुओं के होने की बात कही गई है। धूमकेतु की पूंछ और 'कोमा' में अन्य साधारण अणु, जैसे कार्बनडाय-आक्साइड, नाइट्रोजन, अमोनिया, मीथेन, कार्बन-मोनोआक्साइड तथा पानी पाए गए हैं। पूंछ में पोलीफारमल्डीहाइड और पोलीसिक्काराइड्स भी देखे गए हैं। इन सभी से साधारण और जटिल प्रोटीन अणु बन सकते हैं—प्रोट्रीन-संश्लेषण, जीवन के बनने और बने रहने की आवश्यक शर्त भी तो है।

अब सवाल जरा आगे बढ़ता है और पूछा जा सकता है कि 'जीवन-बीज' बनाने वाले पूर्वज जैव-अणु धूमकेतुओं में आखिर कहां से आए! क्या सुदूर, अत्यन्त गहन अन्तरिक्ष में मानव की परिकल्पना से भी परे कोई ऐसी प्राकृतिक मशीन तो नहीं है जहां जीवन के बीज हैं। क्या इस मशीन के सम्पर्क में आने पर ही धूमकेतुओं से ये चिपट जाते हैं और अन्य ग्रहों पर बिखर जाते हैं? यह भी हो सकता है कि जीवन के बीज हर जगह बिखेर दिये जाते हों या ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के वक्त ही बिखेर दिये गये थे और जहां-जहां धरती-जैसी अनुकूल परिस्थितियां मिलती गईं वहां-वहां इनका विकास साधारण जीवन और क्रमशः बुद्धिमान जीवन में होता चला गया। लेकिन किसी भी वैज्ञानिक धारणा की पुष्टि के लिए विज्ञान प्रमाण मांगता है। धरती पर जीवन की उत्पत्ति में रासायनिक अणुओं के अलावा दो प्रमुख प्राकृतिक शक्तियों उष्मा और प्रकाश—ने तो प्राथमिक भूमिका निभाई है। इस बात का भी प्रबल प्रमाण है कि विद्युत और चुम्बकत्व ने भी पूरा योगदान दिया।

बिजली की कड़क

जीवन केवल इसी ग्रह पर रासायनिक क्रियाओं के जरिए आक्सीकृत वातावरण में पनपा, इस बात को १९२० में पहली बार एक रूसी जैव-वैज्ञानिक ए. आई. ओपारिन और

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्रिटिश जीवविज्ञानी जे. बी. एस. हाल्देन ने कहा। इनकी राय में मीथेन, नाइट्रोजन, अमोनिया और हाइड्रोजन की उपस्थिति में ही जैवरसायन यौगिक (आर्गेनिक कम्पाउंड) बन सकते थे, अन्यथा नहीं। उनकी यह धारणा कि जीवन का आरम्भ, घटती जा रही आक्सीजन की मात्रा वाले प्रारम्भिक वातावरण में ही सम्भव हुआ, को १९५२ में उस समय और सम्बल मिला जब शिकागो विश्वविद्यालय में एक छात्र स्टैनले मिलर ने प्रयोगशाला में मीथेन, अमोनिया और हाइड्रोजन के घोल में से निरन्तर बिजली गुजार कर उसे अमीनो अम्लों में बदल दिया। इससे बहुत से वैज्ञानिक चमत्कृत हो उठे और उन्हें लगा कि हां, पृथ्वी पर भी शुरू-शुरू में आसमानी बिजली की कड़क से कथित गैसों के बादलों से जैवअणु बने होंगे। स्टैनले मिलर की तरह जिन अन्य वैज्ञानिकों ने बिना जीवित पदार्थ के जीवन की उत्पत्ति के पूर्वज जैवपदार्थ बना डाले हैं, इनमें सिडनी फाक्स का नाम भी अग्रणी है। फाक्स ने भी १५ साल अनुसंधान कर के जीवन-निर्माण की मूल इकाइयों—कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, सल्फर और फास्फोरस—के योग से जीवन की आधार प्रोट्रीन के जटिल अणुओं का निर्माण कर यह साबित करने की कोशिश की कि जीवन की शुरूआत कैसे हुई होगी।

लेकिन धूमकेतुओं के अलावा गहन अन्तरिक्ष में जीवन के बीच खोजने वाले वैज्ञानिकों को यह सवाल बार-बार तंग करता रहा कि धरती के अलावा ब्रह्माण्ड में कहीं अन्य भी जीवन की उत्पत्ति जरूर हुई होगी। वहां किन परिस्थितियों में पहले प्रारम्भिक जीवन पनपा होगा? बैक्टीरिया और वाइरस-जैसे साधारण प्रोटीन संरचना वाले जीवित प्राणियों का भी क्या अन्तरिक्ष में अस्तित्व रहा होगा फ्रेड हायल और विक्रमसिंघे जैसे खगोलविदों ने यही सिद्ध करने के लिए कई तरह के प्रमाण देकर अपनी धारणाओं की पुष्टि करने का प्रयत्न किया है।

बैक्टीरिया का सफर

यह धारणा साबित करने के लिए हायल और विक्रमसिंघे अन्तरिक्ष में विद्यमान उन अतिशूक्ष्म धूलि कणों को खोजते हैं, जो विश्व में उस समय से विद्यमान हैं जब 'महाविस्फोट' हुआ था। ये धूलिकण बहुत ऊंचाई पर समतापमण्डल में उड़ने वाले वायुयानों और स्पेस शटल से भी एकत्रित किये गये हैं। इनकी जांच करने से यह साबित होता जा रहा है कि ये कण ही 'प्री-वायोटिक मैटर' के दूत हैं। इसका मतलब यह हुआ कि अन्तरतारकीय अन्तरिक्ष में घूम रहे ये कण बैक्टीरिया ही हैं जो अत्यन्त ठण्ड और तापभरे वातावरण में भी अपने को जिन्दा रखते हैं। यही बैक्टीरिया धूमकेतुओं के नाभिक में समा जाता है और धरती जैसे ग्रह पर आ जाता है जिस तरह धूमकेतुओं को वाहक के रूप में इस्तेमाल कर बैक्टीटीरिया धरती तक पहुंचने की धारणा बनाई गई है, उसी तरीके से उल्कापिंड भी बैक्टीरिया लाने के वाहक बने हैं। इस धारणा के विरोधियों का कहना है कि अन्तरिक्ष की कठिन परिस्थितियों में, जहां कई घातक विकिरण मौजूद हैं, बैक्टीरिया जिंदा नहीं रह सकता।

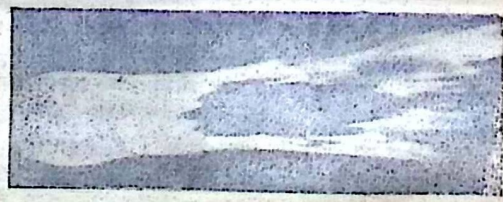

हेली का धूमकेतु : टी. वी. फोटो

प्रयोगशाला में जैव पदार्थ का निर्माण

अन्तरतारकीय धूल और गैस के विशाल बादलों का वैज्ञानिक परीक्षण अभी हुआ ही

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कहां है, जिससे यह निश्चित हो सके कि उनमें कितना आदिम जैव-पदार्थ (प्री-बायोटिक मैटर) है। फिर भी वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में ऐसा निश्चित करने का प्रयास किया है। नीदरलैण्ड के लीडन विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों जे. मेयो ग्रीनवर्ग और लुई एलामैंनडोला ने अपनी प्रयोगशाला में एक शून्य अवस्था वाले शीशे के कक्ष में ऐसे जैव-पदार्थ की अवस्थाएं तैयार कीं। इसे शून्य से ४४१ दर्जे नीचे फारेनहाइट तक ठण्डा किया गया। यह क्रियाकलाप अन्तरतारकीय धूलिकण की नकल कहा जा सकता है। कई दिन तक थोड़ी-थोड़ी देर तक जब पराबैंगनी विकिरण से धूलिकणों के गैस-वातावरण को गर्म किया गया तो इससे कई तरह के जैव-अणुओं का निर्माण हो गया। यह भी कहा जा रहा है कि जब हमारे सूर्य का निर्माण हुआ तब उससे आज के मुकाबले बहुत ज्यादा मात्रा में पराबैंगनी विकिरण निकलता था। हो सकता है इसी विकिरण के विद्युत-प्रकाशीय प्रभाव (फोटोइलेक्ट्रिक इफेक्ट) की वजह से धरती और निकट अन्तरिक्ष में प्री-बायोटिक मैटर या बैक्टीरिया बना हो। इस तरह का प्री-बायोटिक मैटर या बैक्टीरिया ब्रह्माण्ड में दूसरे सूर्यों के निकट भी जरूर बना होगा। क्यों? चूंकि धूमकेतु घुमक्कड़ पिंड हैं, इसलिए प्री-बायोटिक मैटर इनके साथ हो लिया और जगह-जगह बिखरता चला गया। संयोग से ऐसे कुछ धूमकेतु धरती से या तो टकरा गए या इसके वातावरण में से गुजरे, तभी धरती पर जीवन का बीज बिखर गया होगा।

धरती पर जीवन की उत्पत्ति के बारे में अन्तिम सत्य अभी उभरना बाकी है। हेली के धूमकेतु का आना इस बार इसीलिए ज्यादा महत्वपूर्ण माना जा रहा है कि वैज्ञानिक समुदाय को इस समय किये गये अनुसंधानों से बहुत से अनुत्तरित प्रश्नों का जवाब मिल जाएगा।

दूरबीन

फिलहाल आदमी सुदूर ब्रह्मांडीय पिंडों तक सशरीर नहीं पहुंच सकता। तो फिर वह इनके बारे में कैसे जाने? तरह-तरह की दूरबीनों ने इन पिंडों का अध्ययन करने के लिए मानव को 'खिड़कियां' प्रदान की है। इनसे 'झांक-झांक कर' ही मानव ने ब्रह्माण्ड के बारे में जानकारी जुटाई है।

आधुनिक खगोल वेधशालाओं ने ब्रह्माण्ड के बारे में बहुत वृद्धि की है। अंधेरे आकाश में चमकते सितारों, आकाशगंगाओं, मंदाकिनियों, नीहारिकाओं, नक्षत्रों और यदा-कदादिखाई देने वाले पुच्छल तारों अथवा धूमकेतुओं पर जिज्ञासु व्यक्ति हजारों साल से निगाह रखते जा रहे हैं। गैलिलियो की छोटी-सी लैंस वाली दूरबीन तो केवल सौरमण्डल के ग्रहों और सूर्य को ही देख पाई थी, परन्तु आज हमारे पास अपवर्तक, परावर्तक, एक्स-रे, इंफ्रारेड और अल्ट्रावायलट शक्तिशाली दूरबीनें हैं। गैलिलियो ने १६१० में पृथ्वी से १५ करोड़ किलोमीटर दूर सूर्य की सतह पर सौर-धब्बों को देखा था। अब ३७५ वर्ष बाद हम इतने सक्षम हो जाएंगे कि स्पेस टेलीस्कोप की मदद से १४ अरब प्रकाशवर्ष दूर बड़ी क्षीण कांति वाले सितारों को भी देख पाएंगे (तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकंड की गति से चलने वाला प्रकाश एक वर्ष में जितनी दूरी तय करेगा, उसे एक प्रकाशवर्ष दूरी कहते हैं।

ज्ञान की दूसरी शाखाओं की भांति खगोल विज्ञान ने भी प्रकृति अथवा सृष्टि की रचना के बारे में हमारे ज्ञान की वृद्धि की है। वैज्ञानिकों की धारणा है कि ब्रह्माण्ड की

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

उत्पत्ति करीब १५ अरब वर्ष पहले एक महाविस्फोट के जरिये हुई थी। घनीभूत पदार्थ चारों ओर बिखर गया। इसी से सितारों, ग्रहों, धूमकेतुओं आदि का जन्म हुआ। ब्रह्माण्ड में पिण्डों के अलावा अब भी कुछ ऐसे विशाल धूलि-बादल हैं, जिनके बारे में ख्याल है कि ये ब्रह्माण्ड के जन्म के अवशेष ही हैं। विभिन्न प्रकार की दूरबीनों की मदद से खगोलविज्ञानी सुदूर ब्रह्माण्डीय पिण्डों के आकार, घनत्व, रंग-रूप, पृथ्वी से दूरी, चमक और गति के अलावा उनकी रासायनिक संरचना का भी पता लगाते हैं।

इस प्रकार जहां मानव निर्मित उपग्रह नहीं जा पाते, वहां दूरबीनों की 'खिड़कियों' से मानव आज देख पा रहा है। खगोल दूरबीनों की स्थापना कर ब्रह्माण्ड का अध्ययन करने में भारत, चीन, जपान, आस्ट्रेलिया, सोवियत संघ, अमेरिका, कनाडा और यूरोपीय देश अग्रणी रहे हैं।

सतरंगा प्रकाश

उन्नीसवीं शताब्दी में यह पता चला कि प्रकाश, विद्युत-चुम्बकीय विकिरण (इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक रेडिएशन) ही है। धीरे-धीरे यह भी पता चला कि आंखों से दिखाई देने वाले प्रकाश के विकिरण के अलावा बड़ी मात्रा में अदृश्य विकिरण भी ब्रह्माण्ड में मौजूद हैं। खोजबीन से यह भी पता चला कि समस्त दृश्य और अदृश्य विकिरण, स्रोत से बाहर चारों तरफ तरंगों की शक्ल में निकलता है। हर तरह के विकिरण की तरंग-लम्बाई भी अलग-अलग होती है। वैज्ञानिकों ने विभिन्न तरंगों की पहचान की और इसे विद्युत-चुम्बकीय वर्णक्रम (इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक स्पैक्ट्रम) कहा। दृश्य-प्रकाश में सात रंग होते हैं। एक सिरे पर बैंगनी और दूसरे पर लाल। बैंगनी रंग से परे भी तरंगों की लम्बाई कम-से-कम होती जाती है। इन्हे शार्ट वेव्ज कहते हैं। चूंकि ये तरंगे बैंगनी रंग से परे होती हैं, इसलिए इन्हें अल्ट्रावायलट यानि परावैंगनी तरंगें कहा गया है। इसी तरह लाल रंग से परे जितना जाएंगे, उतना ही इन अवरक्त (यानि इंफ्रारेड) किरणों की लम्बाई बढ़ती जाएगी। इंफ्रारेड तरंगों को लांग वेव्ज कहते हैं। इन्हीं तरंगों से रेडियो संचार व्यवस्था चलती है।

ब्रह्माण्ड के जो स्रोत, यानि सितारे, ग्रह, नक्षत्र और मंदाकिनियां, प्रकाश बिखेरते हैं उन्हें तो आप्टिकल (लैंस वाले और दर्पण वाले) दूरबीनों से देखा जा सकता है, परन्तु इनकी एक सीमा है। अभी तक सबसे ताकतवर आप्टिकल दूरबीन से २ अरब प्रकाशवर्ष दूर तक के प्रकाश-स्रोत को देखना सम्भव हुआ है। एक प्रकाशवर्ष ५.८८ × १० खरब किलोमीटर का होता है। यह ताकतवर दूरबीन २०० इंच व्यास के परावर्तक की है और पालोमर पहाड़ पर हेल वेधशाला के नाम से मशहूर है। यह अमेरिका में है। अरबों प्रकाशवर्ष दूर उपस्थित ब्रह्माण्डीय पिंडों या पदार्थों से बेशक प्रकाश धरती या धरती के निकट अंतरिक्ष तक न आता हो, परन्तु परावैंगनी और अवरक्त किरणें पहुंचती रहती हैं। इन्हें देखने के लिये ही इंफ्रारेड, अल्ट्रावायलट और रेडियो दूरबीन के अलावा एक्स-रे दूरबीनों का इस्तेमाल बहुत जरूरी माना गया। किसी भी ऐसे स्रोत से आने वाले अदृश्य विकिरण के प्राप्त नमूनों के आधार पर उस स्रोत की आकृति और रचना की काफी जानकारी जुटाई जा सकती है। प्रकाशित और गैर-प्रकाशित स्रोतों से ब्रह्माण्ड के बारे में किस तरह और कैसी जानकारी जुटाई गई है, इसका संक्षिप्त जिक्र करना उपयुक्त होगा। लैंस वाली दूरबीन हों या दर्पण वाली, उद्देश्य सबका प्रकाश एकत्र करके उसे केन्द्रित (फोकस) करना होता है। लैंस या दर्पण का आकार अथवा व्यास जितना बडा होगा, वह उतना ही ज्यादा प्रकाश-किरणें बटोर सकेगा। अथवा यों भी कह सकते हैं कि न के बराबर दिखाई देने वाले सितारे से आने वाले क्षीण-से भी प्रकाश को बटोर कर उसे एक जगह इस प्रकार फोकस कर देगा, जिससे हमें सितारा साफ और बड़ा नजर आए।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

लैंस वाली दूरबीनें

सबसे पहले चूंकि लैंस का ही प्रचलन हुआ, इसलिए बड़े-बड़े व्यास का अत्यन्त चिकनी सतह का पतला लैंस बनाने की कोशिशें चलती रहीं। अन्ततः ४० इंच व्यास से ज्यादा बड़ा लैंस नहीं बनाया जा सका। विश्व का सबसे बड़ा ४० इंच व्यास लैंस का टेलिस्कोप अमेरिका में शिकागो के पास येरकीज वेधशाला में लगा हुआ है। खगोल वैज्ञानिकों को यह अभास हो गया था कि वे लैंस वाली रिफ्लेक्टिंग दूरबीन से ज्यादा देर काम नहीं ले सकते, इसलिए अठारहवीं शताब्दी में ही वैज्ञानिकों ने अच्छी रिफ्लेक्टिंग यानि प्रकाश-परावर्ती शीशे वाली दूरबीनें बनानी शुरू कर दी थीं। लैंस वाली दूरबीन में एक खराबी यह भी थी कि इसमें अपवर्तन दोष (रिफ्लेक्टिंग एरर) आ जाते थे। साथ ही दृश्यप्रकाश के सातों रंगों की वजह से देखी जाने वाली वस्तु या सितारे से आने वाला प्रकाश कई जगह फोकस हो जाता था। आकार की दृष्टि से कुछ वर्ष पहले तक पालोमर पहाड़ पर २०० इंच व्यास की दूरबीन का विश्व में पहला स्थान था। परन्तु १९७८ में सोवियत संघ ने जब कजाखिस्तान में ६ मीटर (२३४ इंच) व्यास के दर्पण की दूरबीन लगा दी, तो यह पहले नम्बर की हो गई। जहां तक एशिया का सवाल है, पहले टोकियो में लगी ७४ इंच व्यास के दर्पण की दूरबीन का पहला स्थान था। यह भारत में तमिलनाडु में कवलूर स्थान पर चालू हुई ९३ इंच व्यास के दर्पण की दूरबीन ने ले लिया है।

धरती पर लगी दूरबीनों की मदद से सुदूर के प्रकाश-स्रोतों को स्पष्ट रूप से देखे जाने में सबसे बड़ी अड़चन है पृथ्वी का वायुमण्डल, जिसमें धूलिकण और वाष्पकण हैं तथा महानगरों में रात्रि को किया जाने वाला तीव्र प्रकाश। अब अंतरिक्ष तकनीकी इतनी विकसित हो गई है कि शक्तिशाली राकेटों की मदद से पृथ्वी की निकट कक्षा में ३५०-५०० कि. मी. की ऊंचाई पर उपग्रह रूपी दूरबीनें स्थापित करना सम्भव हो गया है। अन्तरिक्ष में दूरबीन स्थापित करने के दो फायदे होंगे। एक तो पृथ्वी के वायुमण्डल की अड़चन समाप्त हो जाएगी। दूसरे, सुदूर ग्रहों या पिंडों से दूरबीन की दूरी समानुपातिक रूप से घट जाएगी अर्थात ऊंचाई अगर थोड़ी-सी भी बढ़ जाए, तो दूरबीन का दृश्यक्षेत्र काफी विस्तृत हो जाता है। यह दृश्यक्षेत्र टार्च से निकली रोशनी की तरह प्रसार पाता है।

नजर दो अरब प्रकाशवर्ष दूर

आप्टिकल टेलिस्कोपों की कड़ी में अगले साल अमेरिकी अन्तरिक्ष संस्थान 'नासा' जब 'स्पेस टेलिस्कोप' स्पेस-शटल की मदद से छोड़ेगा तो मनुष्य की ब्रह्माण्ड में झांकने की क्षमता आश्चर्यजनक रूप से बढ़ जाएगी। अभी तक एक्स-रे टेलिस्कोप की मदद से डेढ़ अरब प्रकाशवर्ष दूर स्थित। (क्वासर स्टेलर रेडियो सोर्स) को क्वासी ही देख पाना सम्भव हुआ था। परन्तु नए 'स्पेस टेलिस्कोप' से दो अरब प्रकाशवर्ष दूरी तक देखा जा सकेगा। इस टेलिस्कोप से खगोलविदों द्वारा देखे जाने वाले वर्तमान ब्रह्माण्ड क्षेत्र से ३५० गुणा ज्यादा क्षेत्र देख पाना सम्भव होगा। यह अन्तरिक्ष दूरबीन हर लिहाज से अपने पूर्वज आप्टिकल टेलिस्कोपों से कहीं ज्यादा संवेदनशील होगी। इसकी विशेषता होगी ५० गुना क्षीण प्रकाशस्रोत देखने की शक्ति और १० गुणा ज्यादा साफ तस्वीर बना सकने की सामर्थ्य। इसका सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है २४० सेंटीमीटर व्यास का दर्पण। पारदर्शी शीशे पर अणु-दर-अणु एक इंच के तीस लाखवें हिस्से जितनी मोटी परत चढ़ाने से ही बढ़िया और उत्तम दर्पण बनाना सम्भव हुआ। अत्याधुनिक तकनीकियों के मेल से बनी यह दूरबीन ब्रह्माण्ड के अभूतपूर्व नजारे दिखा सकेगी। इस दूरबीन में एक ऐसा कंप्यूटरीकृत कैमरा भी लगाया गया है, जिसकी मदद से नंगी आंखों से देखे जा सकने वाले क्षीण से क्षीण प्रकाश-स्रोत से २० हजार गुणा क्षीण प्रकाश-स्रोत को देख पाना सम्भव होगा। इस तरह पहले न दिखाई देने वाले लाखों सितारे इसकी पकड़ में आ जाएंगे।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

एक्स-रे-दूरबीन

दूसरे महायुद्ध के बाद एक्स-रे खगोल विज्ञान ने काफी तरक्की की। अन्तरिक्ष में कृत्रिम उपग्रहों की तरह स्थापित की गई कोपरनिकस, ऊहुरू (यू. एच. यू. आर. यू.) और आइंस्टाइन एक्स-रे वेधशालाओं से अनेक ऐसे सितारों की जानकारी मिली है, जिन्हें साधारण दूरबीनों से कभी नहीं देखा जा सकता था। एक्स-रे टेलिस्कोप में एक दर्पण लगा होता है। टकराने वाली एक्सरे को यह दर्पण एक जगह फोकस करता है। फोकस के स्थान पर एक्स-रे खोजी (डिटेक्टर) लगे होते हैं। ये डिटेक्टर एक्स-रे छोड़ने वाले स्रोत की स्थिति, आकार, संरचना और इसकी संरचना में प्रयुक्त विभिन्न रासायनिक तत्वों की उपस्थिति सम्बन्धी जानकारी एकत्रित करते हैं। एक्स-रे वेधशाला की एक अनुपम खोज से पता चलता है कि सभी दस किस्म के सितारे थोड़ी या बहुत मात्रा में एक्स-किरणें छोड़ते हैं।

एक्स-रे टेलिस्कोपों से सितारों का जन्म-मरण, जीवनकाल, जवानी और बुढ़ापे-जैसी महत्वपूर्ण जानकारी जुटाने में मदद मिली है। एक्स-रे वेधशाला से जितना सम्भव है, उतने क्षेत्र में ब्रह्माण्ड का सर्वेक्षण पूरा होने पर ही असली नक्शे सामने आएंगे। जिस तरह ब्रह्माण्ड को समझने के लिए आप्टिकल और एक्स-रे दूरबीनों की जरूरत पड़ी, उसी तरह रेडियो दूरबीनों का निर्माण भी जरूरी समझा गया। विद्युत-चुम्बकीय वर्णक्रम में दो तरह की तरंगें ही धरती के वायुमण्डल को छेद कर सतह तक पहुंच पाती हैं। ये हैं दृश्य प्रकाश की तरंगें और रेडियो तरंगें। चूंकि रेडियो तरंगें (एक मिलीमीटर से दस मीटर तरंग लम्बाई की) धरती पर बिना विरुपित (डिस्टार्ट) हुए पहुंच जाती हैं, इसलिए इन्हें पकड़ने के लिये धरातल पर बड़ी-से-बड़ी रेडियो दूरबीनें बनाना सम्भव है।

रेडियो एस्ट्रोनोमी

धरती तक रेडियो तरंगों के पहुंचने की खोज १९३२ में के. जी. जांस्की ने की थी। परन्तु रेडियो एस्ट्रोनोमी का विकास दूसरे महायुद्ध के बाद शान्तिकाल में ही सम्भव हो पाया। रेडियो तरंगों का जन्म ब्रह्माण्ड में हमारे सूर्य-जैसे अत्यन्त गर्म स्रोतों से भी होता है और अपेक्षाकृत 'ठंडे' स्रोतों से भी। गैर-ऊष्ण स्रोतों से आने वाली रेडियो तरंगें आकाशगंगाओं या मंदाकिनियों से आती हैं। बहुत-सी चक्रवाती मंदाकिनियों से भी रेडियो तरंगें जन्म लेती हैं। कुछ मंदाकिनियों से काफी मात्रा में शक्तिशाली रेडियो-तरंगें आती हैं। इन्हें रेडियो-गैलेक्सी ही कहा गया है। सबसे ज्यादा शक्तिशाली रेडियो तरंगों के स्रोत हैं 'क्वासर' यानि क्वाक्सी स्टैलर रेडियो सोर्स। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार क्वासर पृथ्वी से सबसे दूरस्थ 'पिंड' हैं। ये पृथ्वी से दूर भागते जा रहे हैं और इनके भागने की गति है २,४६,००० कि. मी. प्रति सेकण्ड यानि प्रकाश की गति से कुछ ही धीमी। ब्रह्माण्ड में कुछ ऐसे स्रोत भी हैं, जिनसे स्पंद रूप में रेडियो तरंगें निकलती हैं। इन्हें 'पल्सर' यानि 'पल्सेटिंग स्टार' कहा गया है। ये एक नपे-तुले अंदाज में धड़कन की तरह रेडियो तरंगें प्रसारित करते हैं।

अवरक्त तरंगों का खेल

न केवल सितारे, बल्कि कई नीहारिकाएं अवरक्त तरंगें निकालती रहती हैं। अगर इन तरंगों को पकड़ कर न देखा जाए तो अनेक सितारों और नीहारिकाओं तथा मंदाकिनिओं का वास्तविक आकार और स्वरूप कभी प्रकट न हो। सबसे उन्नत इंफ्रारेड टेलिस्कोप अमेरिका, इंग्लैण्ड और नीदरलैण्ड ने संयुक्त रूप से 'इंफ्रारेड एस्ट्रोनोमी सैटेलाइट' के नाम से २६ जनवरी, १९८३ को अन्तरिक्ष में पृथ्वी से ९०० कि. मी. ऊंची कक्षा में स्थापित किया गया था।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पराबैंगनी दूरबीनें

अल्ट्रावायलट यानि पराबैंगनी दूरबीनों में सबसे महत्वपूर्ण काम किया 'इंटरनेशनल अल्ट्रावायलट एक्सप्लोरर' ने। इसे ३ अप्रैल, १९७८ को अमेरिका के केप केनेवरल के अन्तरिक्ष अड्डे से अन्तरिक्ष में छोड़ा गया था। यह उपग्रहनुमा दूरबीन अटलांटिक महासागर के ऊपर ४२ हजार कि. मी. ऊंची भू-कक्षा में स्थापित की गई थी। चूंकि पराबैंगनी किरणें धरती तक नहीं पहुंच पातीं और अनेक ब्रह्माण्डीय स्रोत पराबैंगनी तरंगें छोड़ते हैं, इसलिए इनके अध्ययन के लिए अन्तरिक्ष से उपयुक्त दूसरी कोई जगह नहीं हो सकती।

अणुओं से बने पदार्थ से निकलने वाली अधिकांश ऊर्जा विद्युत-चुम्बकीय वर्णक्रम के पराबैंगनी क्षेत्र में उपलब्ध होती है। वैसे भी ब्रह्माण्ड में सर्वाधिक मात्रा में क्रम से उपलब्ध हाइड्रोजन, हीलियम, आक्सीजन, कार्बन, नाइट्रोजन सिलिकन और मैग्नीशियम में से कोई भी तत्व विद्युत-चुम्बकीय वर्णक्रम के दृश्य-तरंग क्षेत्र में ऊर्जा विकिरण नहीं करता—यह विकिरण या तो पराबैंगनी या अवरक्त के रूप में होता है। यह तो ज्ञात ही है कि ब्रह्माण्ड में सभी सितारों, पिंडों, नीहारिकाओं आदि की रासायनिक संरचना में इन कथित तत्वों का न्यूनाधिक योगदान है, इसलिए इनकी जानकारी जुटाने का एक अदद तरीका है इनसे अल्ट्रावायलट तरंगों के रूप में निकलने वाली ऊर्जा को पकड़ना।

मानव फिलहाल अन्तरिक्ष की अन्तहीन दूरियों को तय नहीं कर सकता और निकट जा कर सितारों, नीहारिकाओं का अध्ययन नहीं कर सकता, इसलिए बेहतर और सुलभ तरीका यही है कि तरह-तरह की दूरबीनों से ही फिलहाल इनका अध्ययन किया जाए। आने वाले समय में अन्तरिक्ष में और धरती पर अधिक उन्नत दूरबीनें लगाई जाएंगी, जिनसे ब्रह्माण्डीय ज्ञान में काफी वृद्धि हो सकेगी। और यह जानकारी जुटाए बगैर लम्बी दूरी की अन्तरिक्ष यात्राएं भी सम्भव नहीं हो पाएंगी।

—०—

ब्रह्मांड में जीवन है कि नहीं ?

मानव-मस्तिष्क के लिए जीवन की उत्पत्ति का सवाल सदा से ही सर्वाधिक महत्व का रहा है। हमारी धरती पर जीव-जगत का उद्भव किस प्रकार हुआ ? क्या इस विशाल ब्रह्मांड में केवल हमारी पृथ्वी पर ही जीव-जगत का अस्तित्व है ? क्या ब्रह्मांड के अरबों प्रकाश-वर्ष के विस्तार में फैले हुए अरबों-खरबों पिंडों पर जीवन का कहीं कोई अस्तित्व नहीं है ? क्या सुदूर अंतरिक्ष के पिंडों पर हम से भी अधिक बुद्धिमान प्राणियों का अस्तित्व सम्भव नहीं है ?

यदि सम्भव है, तो पृथ्वी से परे के बुद्धिमान प्राणी किस तरह के होंगे ? सुदूर अंतरिक्ष के उन प्राणियों के साथ हम कैसे संपर्क स्थापित कर सकते हैं ? या फिर इस असीम विश्व में हमारे सिवा और कोई नहीं है ? तब तो हम ही 'अखिलेश्वर' हैं। और, यदि ब्रह्माण्ड के अनेकानेक पिंडों पर हमसे भी कहीं अधिक बुद्धिमान प्राणियों का निवास है, तो फिर हमारे मानवीय 'ईश्वर' कोई माने नहीं रखते।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हाल के वर्षों में जीवन की मूलभूत संरचना के बारे में हमें महत्वपूर्ण जानकारी मिली है। अंतरनक्षत्रीय दिक् में भी जैव तत्वों की खोज हुई है। आकाशगंगा में समीप के कुछ तारों के ग्रह-मण्डल होने के बारे में भी जानकारी मिली है। इसलिए पृथ्वी के परे दूर के पिंडों पर जीवन के अस्तित्व की परिकल्पना को अब अधिकाधिक समर्थन मिलता जा रहा है। ब्रह्माण्ड में जीवन के अस्तित्व के अनुसंधान के बारे में एक नया व्यापक विज्ञान एक्सोबायोलॉजी ही अब अस्तित्व में आ गया है। अंतरिक्ष-अनुसंधान का युग आरंभ होने के साथ-साथ सुदूर अंतरिक्ष की सभ्यताओं के साथ संपर्क स्थापित करने के प्रयास भी प्रारम्भ हो गए हैं। अंतरिक्ष के अच्छे-बुरे प्राणियों के बारे में ढेर सारे काल्पनिक कथानक भी लिखे जा रहे हैं। सुदूर अंतरिक्ष के प्राणियों को धरती से कुछ संदेश भी भेजे जा चुके हैं, और संदेश भेजने या प्राप्त करने के लिए नई-नई योजनाएं अस्तित्व में आ रही हैं। यहां हम ब्रह्माण्ड में जीवन के अस्तित्व से संबंधित इन्हीं सब अनुसंधानों और प्रयासों की जानकारी प्रस्तुत कर रहे हैं।

एक दुष्कर 'संयोग'

सर्वप्रथम धरती के जीवन से सम्बन्धित कुछ बुनियादी बातों को जानना जरूरी है। इसी सदी के छठे दशक में हमें जानकारी मिली है कि डी. एन. ए. अणु धरती के समस्त जीवों की एक बुनियादी चीज है। घुमावदार सीढ़ियों (डबल हैलिक्स) के आकार का यह अणु हाईड्रोजन, आक्सीजन, कार्बन और नाईट्रोजन तत्वों से बना है, और इसकी संरचना अत्यन्त जटिल है। अन्य शब्दों में, जीवन की बुनियादी बनावट सरल नहीं है। तब क्या जीवन का सृजन सहजता से नहीं, बल्कि एक दुष्कर 'संयोग' से हुआ है? अनेक वैज्ञानिकों का यही मत है। क्या धरती पर आदिम जीवन के इस सृजन के संयोग के पीछे किसी 'वाह्य शक्ति' का हाथ रहा है? क्या धरती पर डी. एन. ए. जैसे अणुओं का पदार्पण वाह्य अंतरिक्ष से हुआ है? लेकिन केवल डी. एन. ए. अणु की रचना ही जटिल नहीं है, वास्तविक जीवन की ओर इस अणु के विकास का अगला दौर भी अत्यन्त जटिल है, और जीव-वैज्ञानिक अभी तक इसे ठीक से समझ नहीं पाए हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि धरती पर जीवन के उद्भव और विकास का सवाल अभी पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हुआ है।

ए. जे. ओपारिन और जे. बी. एस. हाल्डेन-जैसे भौतिकवादी वैज्ञानिकों की यह दृढ़ मान्यता रही है कि रासायनिक विकास से ही स्वाभाविक रूप से जैव विकास की प्रक्रिया शुरू हुई है। इन वैज्ञानिकों के मतानुसार परमाणु के संयोजन से आरम्भ में सरल से अणु बने, फिर जटिल अणु बने, फिर इनसे अमिनो अम्ल और प्राथमिक स्वरूप के जीवों का सृजन हुआ। प्रयोगशालाओं में विशिष्ट भौतिक वातावरण में अमिनो अम्लों का कृत्रिम निर्माण करने में भी सफलता मिल गई है। इसलिए अनेक वैज्ञानिक धरती पर जीवन के उद्भव को एक सहज व स्वाभाविक रासायनिक संयोजन की प्रक्रिया ही मानते हैं।

अब हम वाह्य-अंतरिक्ष में जीवन के अस्तित्व की संभावनाओं पर विचार करेंगे। इस संदर्भ में सर्वाधिक महत्व की बात यह है कि जिन तत्वों से धरती के जीव-जगत का सृजन हुआ है, वे तत्व कमोवेश रूप में समस्त ब्रह्मांण्ड में विद्यमान हैं। तो क्या यह तथ्य इस बात का स्पष्ट सबूत है कि समूचे ब्रह्मांड में जीवन का व्यापक अस्तित्व है?

पिछले दो दशकों में जानकारी मिली है कि तारों के बीच के अंतरिक्ष में मौजूद गैस व धूल में जटिल रासायनिक अणु—अकार्बनिक और कार्बनिक, दोनों—विद्यमान हैं। यह जानकारी अत्यन्त महत्व की है, क्योंकि डी. एन. ए. की रचना भी इन्हीं अणुओं से होती है। इसका अर्थ यह है कि जीवन की 'इमारत' के लिये बुनियादी 'ईंटें' वाह्य-अंतरिक्ष में भी मौजूद हैं। यही कारण है कि अनेक खगोलविद अब ब्रह्मांड के विस्तार में के जीवन अस्तित्व के बारे में अधिक आशावान हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पोन्नमपेरूमा की खोज

श्रीलंका के वैज्ञानिक पोन्नमपेरूमा ने इस दिशा में एक महत्वपूर्ण खोज की है। १९९६ में आस्ट्रेलिया के मुर्चिसन स्थान पर गिरे एक उल्का-प्रस्तर का विश्लेषण करके पोन्नमपेरूमा ने उसमें एक दर्जन से अधिक अमिनो अम्लों की खोज की है, और यह सिद्ध किया है कि ये अमिनो अम्ल पार्थिव मूल के नहीं हैं, बल्कि उल्का-प्रस्तर के साथ बाह्य-अंतरिक्ष से धरती पर पहुंचे हैं। ओपारिन और हाल्डेन की तरह पोन्नमपेरूमा भी यही मानते हैं कि रासायनिक विकास से ही जैव विकास की प्रक्रिया शुरू हुई है।

इस प्रकार, स्पष्ट होता है कि बाह्य-अंतरिक्ष में भी जीवन के उद्भव और विकास के लिये सामग्री और परिस्थितियां मौजूद हैं। कुछ वैज्ञानिकों का तो यहां तक मत है कि धरती पर जीवन के उद्भव के लिये अनुकूल परिस्थितियां कभी नहीं रहीं, और धरती पर जीवाणुओं का आगमन बाह्य-अंतरिक्ष से हुआ है। फ्रेड हॉयल और चन्द्र विक्रमसिंघे ने हाल में परिकल्पना प्रस्तुत की है कि सौर-मंडल की अतिदूरस्थ सीमाओं से सूर्य के पास पहुंचने वाले धूमकेतु जब पृथ्वी के पास से गुजरते हैं, तो वायुमंडल में जीवाणुओं और विषाणुओं का छितराव करते हैं।

भारतीय चिंतन-परम्परा के लिए विश्व में अनेकानेक 'लोकों' का अस्तित्व कोई अनोखी बात नहीं रही है। भारतीय आख्यानों में 'पृथ्वीलोक' या 'मर्त्यलोक' के अलावा अन्य अनेक 'लोकों' की कल्पना की गई है। हमारे काल्पनिक देवी-देवता बड़े मजे में एक 'लोक' से दूसरे 'लोक' में उन्मुक्त विचरण करते रहे हैं। हमारे यहां 'परलोक' के अस्तित्व को सदैव स्वीकार किया जाता रहा है। दूसरी तरफ, हमारे धर्मों की यह दृढ़ मान्यता भी रही है कि मनुष्य जीवन ही सर्वश्रेष्ठ है। साथ ही, धरती को सर्वश्रेष्ठ मान कर इसे विश्व के केन्द्र में स्थित माना जाता रहा है। परंपरागत भारतीय ज्योतिष की भी यही मान्यता रही है। प्राचीन यूनान के कुछ चिंतक विश्व में जीवन की सर्वव्यापकता में विश्वास रखते थे। परन्तु आगे जाकर ईसाई धर्म ने पृथ्वी और मानव को 'विशिष्ट' और 'अद्वितीय' घोषित कर दिया। इसीलिए ईसाइयत में ईश्वर द्वारा धरती पर भेजे गये एक 'उद्धारक' की धारणा अस्तित्व में आई है। यदि ब्रह्मांड में अन्य प्राणियों का अस्तित्व है, तो क्या उन्हें भी उद्धराकों की आवश्यकता नहीं होगी?

आकाशगंगा में दो खरब तारे

अब हम जानते हैं कि विशाल ब्रह्मांड में पृथ्वी की स्थिति महासागर में एक बूंद के बराबर भी नहीं है। हमारी आकाशगंगा ब्रह्मांड की एक सामान्य मन्दाकिनी (गैलेक्सी) है। इस आकाशगंगा में करीब २०० अरब तारे हैं, जिनमें हमारा सूर्य एक सामान्य तारा है। आकाशगंगा की चौड़ाई एक लाख प्रकाशवर्ष है, और मोटाई करीब २० हजार प्रकाशवर्ष। हमारा सूर्य (समूचा सौर-मंडल) भी आकाशगंगा-मन्दाकिनी के केन्द्रभाग में नहीं है। वह केन्द्र से करीब ३० हजार प्रकाशवर्ष दूर है, और निरन्तर आकाशगंगा में चक्कर लगाता रहा है। यह हुई ब्रह्मांड की केवल एक मन्दाकिनी की, हमारी अपनी मन्दाकिनी की स्थिति। ब्रह्मांड में ऐसी, और इससे भिन्न, अरबों मन्दाकिनियां हैं। हमारी मन्दाकिनी के परे दूसरी बड़ी मन्दाकिनी देवयानी हमसे करीब २० लाख प्रकाशवर्ष दूर है। ब्रह्मांड की अतिदूरस्थ मन्दाकिनियां हमसे लगभग दस अरब प्रकाशवर्ष दूर हैं। यह भी जानकारी मिलती है कि दूर की मन्दाकिनियां हमसे निरन्तर दूर भागती जा रही हैं।

ऐसा यह विशाल विश्व क्या, पृथ्वी के अलावा, सर्वत्र निर्जीव है? जिन तत्वों से धरती की चीजों—जैव और अजैव, दोनों—का निर्माण हुआ है, वे कमोबेश रूप में समूचे ब्रह्मांड में पाये जाते हैं। भौतिकी के जो नियम पार्थिव पिंडों पर लागू होते हैं, वही नियम अतिदूरस्थ पिंडों के द्रव्य पर भी लागू होते हैं। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

केवल धरती पर ही जीवन का उद्भव और विकास हुआ है। ब्रह्मांड के अन्य अनेक पिंडों पर जीवन का, हमसे भी अधिक उन्नत सभ्यताओं का अस्तित्व सम्भव है।

आकाशगंगा-मन्दाकिनी में उन्नत सभ्यताओं की गणना करने के लिये खगोलविद फ्रैंक ड्रेक ने एक समीकरण भी प्रस्तुत किया है। आकाशगंगा में तारों के सृजन की औसत रफ्तार, तारों के ग्रह मण्डल, ग्रह-मंडलों की संख्या, जीवन को धारण करने योग्य ग्रहों की संख्या, वस्तुतः जीवन को जन्म दे सकने वाले ग्रहों की संख्या, उन्नत टेक्नॉजी वाले प्राणियों को जन्म दे सकने वालों की संख्या, उन्नत सभ्यताओं का जीवन काल आदि बातों का हिसाब लगाकर इस ड्रेक समीकरण के जरिये—आकाशगंगा में जीवन की व्यापकता का पता लगाने की कोशिश की जाती है।

सिर्फ मशीनों का राज

यह भी संभव है कि कुछ उन्नत सभ्यताओं ने, उनका अस्तित्व मिट जाने के पहले, ऐसी कंप्यूटर-मशीनों का निर्माण कर लिया हो, जो स्वयं अपनी जैसी मशीनों का सृजन कर सकती हैं। ऐसी स्थिति में आकाशगंगा के कुछ ग्रहों पर पूर्णतः मशीनी सभ्यताओं का अस्तित्व सम्भव है। दूर तरफ, एफ. टिपलर—जैसे भी कुछ वैज्ञानिक हैं, जिनका मत है कि हमारे सौर-मण्डल में ही नौ में से आठ ग्रहों पर जीवन का कोई अस्तित्व नहीं है, इसलिये आकाशगंगा के दूसरे अनेकानेक ग्रहों पर भी जीवन होने की कोई सम्भावना नहीं है। लेकिन दूसरे अनेक वैज्ञानिक इतने घोर निराशवादी नहीं हैं। उनका पक्का विश्वास है कि इस विशाल ब्रह्माण्ड में केवल हम-ही-हम नहीं हैं, बल्कि दूसरे लाखों-करोड़ों पिन्ड पर जीवन का, उन्नत सभ्यताओं का, संचार-संबंध स्थापित करने में समर्थ प्राणियों का निवास है।

मानव धूमकेतुओं से डरता क्यों है ?

जब हम प्रकृति के बारे में मनुष्य के विचारों का इतिहास देखते हैं तो पता चलता है कि धूमकेतु हमेशा रहस्य से घिरे रहे हैं। अरस्तू का खयाल था कि धूमकेतु वायुमण्डल में हो रही किसी विचित्र घटना का परिणाम हैं और इनके आने का मतलब है तबाही और सूखा। वैसे यह विचारधारा बहुत पुरानी है। हो सकता है प्रस्तर युग के लोगों ने उस समय आकाश में धूमकेतु को देखा हो, जब भयंकर सूखा पड़ा हो या अकाल, या जब शिकार में उनके साथियों की मृत्यु हो गई हो। इसके कारण अगले धूमकेतु के आने पर उनके दिल में डर पैदा हो जाता रहा होगा। और अगर इस बार भी सूखा, अकाल या मौतों का सिल-सिला आ जाये, तो स्वाभाविक रूप से वे धूमकेतु को ही इसका जिम्मेदार ठहराते रहे होंगे। ये अन्धविश्वास इतने गहरे बैठते गये कि आधुनिक सभ्य समाज में भी ये यदा-कदा प्रकट होते रहते हैं। १६६८ में सर स्तानिसलाव लुबिनित्स्की ने अपनी पुस्तक थिएट्रम कॉमेट्रियम में लिखा था: 'ईश्वर व मनुष्य को ज्ञात···बिना धूमकेतु के कभी कोई तबाही नहीं हुई और बिना तबाही के कभी कोई धूमकेतु नहीं दिखा···वेस्टफिलिया में बिल्लियों में छींक की बीमारी फैलने के लिये धूमकेतु ही तो जिम्मेदार था···' इसी तरह मार्क ट्वेन ने लिखा था कि वे हेली धूमकेतु के साथ ही इस दुनियां में आये और उसी के साथ इस दुनिया से चले जायेंगे।

सचमुच अगर मनुष्य की मुसीबतों की जड़ धूमकेतु हैं तो सारे आसमान में धूमकेतु ही लहराते फिरने चाहिये। हालांकि आज भी धूमकेतु से जुड़े अंधविश्वास के बारे में विस्तार से चर्चा करना, उनको प्रतिष्ठा देना बौद्धिक दृष्टि से गलत होगा—क्योंकि मनुष्य के बौद्धिक विकास में अंधविश्वासों से रोक लगती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अंधविश्वासों से भरे लोक साहित्य से अलग हट कर कुछ विज्ञान-कथा लेखकों ने धूमकेतु की असलियत के इर्दगिर्द अपनी कहानियां लिखीं। १८६० में प्रकाशित जूल्स वर्न की कहानी 'ऑफ ऑन ए कॉमेट' में धूमकेतु का अपना उपग्रह है और इसके आधार पर उसके खगोलवैज्ञानिक पात्र धूमकेतु का भार जानने की कोशिश करते हैं। एच.जी. वेल्स की कहानी 'इन द डेज ऑफ द कॉमेट' में सूर्य की तरफ पूंछवाले एक धूमकेतु का वर्णन है, जिस पर हरे रंग की एक पट्टी है। यह धूमकेतु पृथ्वी की तरफ आता है, लेकिन पृथ्वी और उसके निवासियों पर इसका कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। १९७७ में प्रकाशित लैरी नाइवेन और जेरी पूर्नेल की पुस्तक 'लूसीफर्स हैमर' में एक बहुत बड़े धूमकेतु और पृथ्वी की टक्कर की कहानी है, लेकिन इसको लिखते समय लेखकों ने इस बात का पूरा ध्यान रखा कि उसका वैज्ञानिक पक्ष बिलकुल तथ्यपूर्ण हो।

दुनिया के तमाम लोगों के मन में कुतूहल जगाने वाले ये धूमकेतु भला हैं क्या? यह जान लेने के बाद ही हेली धूमकेतु से नजर मिलाना ठीक रहेगा।

धूमकेतु या पुच्छल तारे को अंग्रेजी में कहते हैं कॉमेट। कॉमेट ग्रीक शब्द 'कॉमेटीस' से बना है, जिसका अर्थ होता है लम्बे वालोंवाला। जैसे किसी सुन्दरी का ताज बनाते हैं उसके लम्बे-लम्बे घने बाल, उसी तरह धूमकेतु का गौरव है उसकी लम्बी पूंछ, जिसको देख कर ही उसका नाम कॉमेट रखा गया। धूमकेतु भी सौर परिवार के अन्य सदस्यों की तरह सूर्य का नियमित रूप से चक्कर लगाते हैं। वे यों ही कभी-कभार रास्ता काट देनेवाले अजनबी नहीं हैं। बल्कि हमारे ही परिवार के दूर के रिश्तेदार हैं।

धूमकेतु शर्मीले होते हैं, इसलिये सौर मण्डल की बर्फीली वीरानियों में जिन्दगी गुजारना पसन्द करते हैं। जैसे कोई डरपोक चिड़िया दाना चुगने को आदमी के पास आकर तुरन्त फुर्र हो जाये, उसी तरह धूमकेतु भी सहमे हुये से सूर्य के करीब आते हैं और तुरन्त लम्बे हो जाते हैं। कई बार तो वे यों आते और चले जाते हैं कि पृथ्वी से दिखाई भी नहीं पड़ते। तो फिर भला कितने धूमकेतु हैं इस ब्रह्मांड में? कुछ वैज्ञानिकों

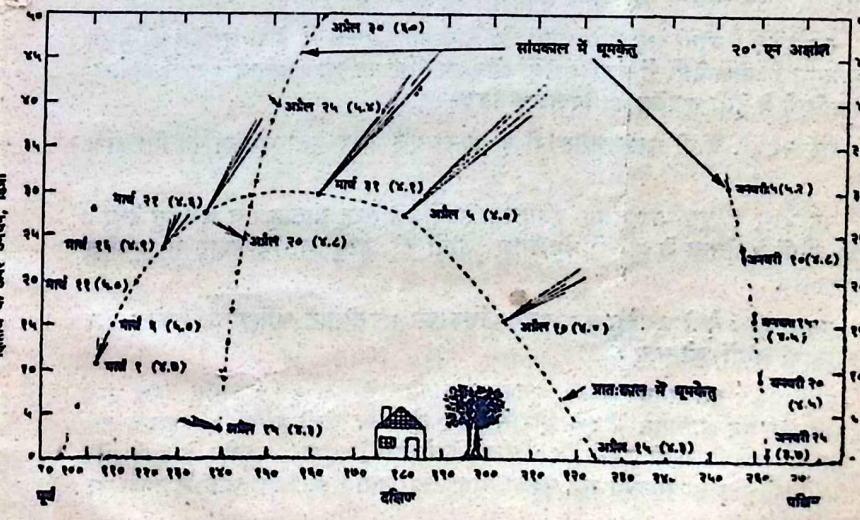

१९८५-८६ के हेली की सूर्योदय और सूर्यास्त के समय की स्थितियां, उन प्रेक्षकों के लिये जो २० उत्तरार्द्ध अक्षांश में हैं (कोष्ठक में दिये गये अंक धूमकेतु की कांति के द्योतक हैं)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का अनुमान है कि इनकी संख्या कई लाख होगी। जे. एच. ऊर्ट नामक वैज्ञानिक के अनुसार प्लूटो के भी पार सौरमंडल के चारों ओर धूमकेतुओं के खजानेवाला 'बादल' है। इस 'बादल' में जब कभी किसी तारे के कारण हलचल मचती है, कुछ धूमकेतु निकलते हैं और सूर्य की तरफ भागते चले जाते हैं।

धूमकेतु दो प्रकार के होते हैं। छोटी अवधि में अंडाकार कक्षा में चक्कर लगाने वाले जो जल्दी-जल्दी वापस लौटते हैं, और लम्बी अवधि वाले धूमकेतु जो हजारों लाखों सालों में एक बार सूर्य के पास पहुंचते हैं, और फिर बहुत-बहुत दूर भाग जाते हैं, अंतरिक्ष की गहराइयों में, प्लूटो के भी पार। कुछ धूमकेतु तो सूर्य के इतने पास पहुंच जाते हैं कि लगता है मानो वे सूर्य को बुहारते हुये चले जा रहे हैं।

हेली का इतिहास

२४० वर्ष ईसा पूर्व : चीनी खगोलशास्त्रियों ने एक भव्य धूमकेतु के आगमन की सूचना दर्ज की, बाद में पता चला कि यही वह धूमकेतु है जिसकी वापसी की भविष्यवाणी हेली ने की थी।

१६४ वर्ष ईसा पूर्व : चीनी ग्रंथों में धूमकेतु के दर्शन का कोई विस्तृत उल्लेख नहीं मिलता। लेकिन बेबिलोनियन मोहरों पर उत्कीर्ण आलेखों से पता चलता है कि उस वर्ष हेमन्त ऋतु में हेली का धूमकेतु आया था।

१२ वर्ष ईसा पूर्व : रोमन इतिहासकार डायोन कैसियस ने खबर दी कि रोम पर धूमकेतु की छाया है, चीन और रोम के खगोलशास्त्रियों ने धूमकेतु को देखा।

सन् ६६ : चीनी खगोलशास्त्रियों ने लगभग सात सप्ताह तक हेली धूमकेतु को देखा। यहूदी इतिहासकार जोसेफस ने जेरूसलम पर एक तलवार की तरह फैले हुये आकाशीय पिंड का वर्णन किया। यह शायद हेली धूमकेतु ही था।

सन् १४१ : चीनी खगोलशास्त्रियों ने मार्च और अप्रैल में हेली धूमकेतु को देखने की सूचना दी। अनेक देशों में हजारों लोग प्लेग का शिकार हुये। अलेग्जेंड्रिया से खगोलशास्त्री टॉलेमी ने हेली धूमकेतु का निरीक्षण किया।

सन् २९५ : चीनी खगोलशास्त्रियों ने फिर एक बार हेली धूमकेतु का निरीक्षण किया।

सन् ४५१ : इस बार चीनी खगोलशास्त्रियों ने तेरह सप्ताह तक धूमकेतु देखा। यूरोप के लोगों ने चैलन्स के युद्ध में डेढ़ लाख लोगों की मृत्यु का जिम्मेदार इस धूमकेतु को ही माना।

सन् ६८४ : हेली धूमकेतु का प्रथम चित्रांकन। इसी वर्ष अतिवृष्टि, अकाल और प्लेग से हजारों लोगों की मृत्यु।

सन् ८३७ : इस समय अनेक धूमकेतु देखे गये, लेकिन हेली धूमकेतु सबसे भव्य था। इसकी पूंछ पूरे आसमान में एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुई थी। यह अब तक के इतिहास में पृथ्वी के सबसे करीब (६० लाख किलोमीटर) आया। धूमकेतु के आने और कुछ राजाओं की मृत्यु का सम्बन्ध अब पक्का मान लिया गया। इसी वर्ष फ्रांस के राजा लुई की मृत्यु हो गयी।

सन् ९१२ : जापानी निरीक्षकों ने भी हेली धूमकेतु के दर्शन किये।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

tized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGang

सन् १०६६ : अंग्रेजी और यूरोपीय इतिहास में हेली धूमकेतु का विस्तार से वर्णन-धूमकेतु का आगमन और नॉरमें के विलियम द्वारा यह घोषणा कि धूमकेतु स्वर्ग का एक अत्यन्त श्रेष्ठ और सुन्दर चिन्ह है।

सन् १२२२ : चंगेज खां ने यह मान लिया कि धूमकेतु उनके विशेष नक्षत्र हैं और इसीलिये जब हेली धूमकेतु आया तो उन्होंने अपनी मंगोलियन फौजों को भेजकर उत्तर-पश्चिम अफगानिस्तान में हजारों लोगों का कत्ल करवा दिया।

सन् १३०१ : हेली धूमकेतु आया। यूरोप में युद्ध छिड़ गया। दांते और ज्योत्तो नामक दो फ्लोरेंटीनों ने इस वर्ष हेली धूमकेतु को देखा। बाद में ज्योत्तो अपने प्रसिद्ध नेटिविटी चित्र में हेली धूमकेतु को बेथलहम के सितारे के रूप में चित्रित करते हैं।

सन् १३७८ : चीन और यूरोप में हेली धूमकेतु का दर्शन।

सन् १४५६ : धूमकेतु आया और उसने देखा मुसलमानों और ईसाइयों के बीच धार्मिक संघर्ष। दोनों पक्ष धूमकेतु से भयभीत।

सन् १५३१ : हेली के अनुमान के अनुसार इस वर्ष आया धूमकेतु ही १६०७ में आया था और १६७२ में भी, जब उन्होंने उसे देखा।

सन् १६०७ : हालांकि दूरदर्शी के आविष्कार से पहले हेली धूमकेतु की यह आखिरी यात्रा थी, फिर भी इसका वैज्ञानिक निरीक्षण इसी वर्ष शुरू हो गया। केपलर ने इसके रास्ते को मापने की कोशिश की।

सन् १६८२ : हेली द्वारा धूमकेतु का निरीक्षण और यह भविष्यवाणी कि १५३१ और १६०७ में यही धूमकेतु आया था और १७५८ के लगभग यह फिर आयेगा।

सन् १७५८ : हेली ने जिस धूमकेतु की वापसी की भविष्यवाणी की थी वह १७५८ में क्रिसमस के दिन दिखाई पड़ा। पहली बार किसी धूमकेतु की वापसी के समय की सफलता पूर्वक भविष्यवाणी की गई थी। धूमकेतु के साथ हेली का नाम जोड़ दिया गया।

सन् १८३५ : हेली धूमकेतु फिर आया। मार्क ट्वेन का जन्म हुआ।

सन् १९१० : हेली धूमकेतु की जोरदार वापसी। मार्क ट्वेन की मृत्यु।

यह खतरनाक भी हो सकते हैं ?

धूमकेतुओं के पदार्थ में एक खतरनाक गैस भी होती है—सायनोजन। जहरीली, ज्वलनशील, रंगहीन। चूंकि धूमकेतु अंडाकार कक्षा में घूमते हैं, इसलिये इस बात की थोड़ी संभावना हो सकती है कि वे पृथ्वी से टकरा जायें या बाल-बाल बच जायें। अगर बाल-बाल बच जाते हैं तो जहरीली सायनोजन से पृथ्वी के वायुमंडल के प्रदूषित हो जाने का खतरा पैदा हो जाता है। अगर पृथ्वी से टक्कर हो जाती है तो तबाही भयंकर हो सकती है। लेकिन इन खतरों की संभावना कितनी है ?

मई १९१० में पृथ्वी हेली धूमकेतु की पूंछ में से गुजरी, लेकिन कुछ नहीं हुआ। सायनोजन की मात्रा महत्त्वहीन थी, लेकिन आम लोगों में जहरीली गैस फैलने का डर फैल गया और उससे बचाने का दावा करने वाली गोलियों से लेकर मुखौटे तक बेचे गये। वैज्ञानिकों ने गणनाएं करके पता चलाया है कि धूमकेतुओं की गैसें पृथ्वी के वायुमंडल में गहराई तक प्रवेश नहीं कर सकतीं और इस तरह इस खतरे की बात बेमानी है।

धूमकेतुओं और पृथ्वी की टक्कर की संभावना लगभग नहीं के बराबर है, लेकिन अगर हुई तो सचमुच खतरनाक होगी। पृथ्वी पर एक जगह ऐसी है जिसने शायद धूमकेतु का हमला सहा है। मध्य साइबेरिया में ३० जून १९०८ को सुबह लगभग सात बजे एक

Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi C

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

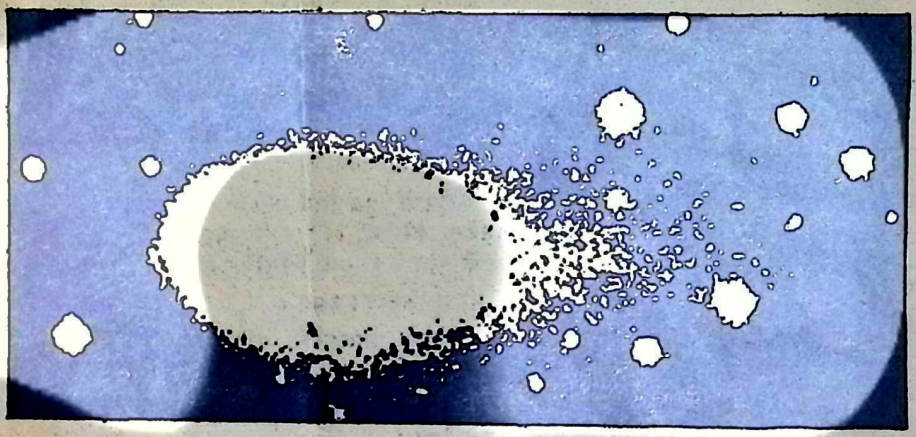

१५ सितम्बर १९८५ को एरिजोना (अमरीका) की एक वेधशाला द्वारा लिया गया हेली धूमकेतु का चित्र; उस समय धूमकेतु पृथ्वी से ३२ करोड़ कि. मी. दूर था

भयंकर विस्फोट हुआ। तीस-चालीस किलोमीटर का इलाका तबाह हो गया। हजारों वृक्ष कट कर छितरा गये। एक हजार किलोमीटर से भी अधिक दूरी तक उस विस्फोट की आवाज सुनाई दी। इससे भूचाल आ गया और ऐसी चुंबकीय हलचलें भी देखने में आयीं जैसी कि परमाणु विस्फोट में आती हैं। विस्फोट से पहले एक बहुत बड़ा आग का गोला दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम दिशा में गर्द का गुबारा छोड़ता हुआ गया। आग की लपटें उठीं और धुएं के बादल में सारा इलाका ढक गया। कुछ पदार्थ २० किलोमीटर की ऊँचाई तक छलका। विस्फोट के बाद पश्चिम एशिया और यूरोप में कई रातों तक खूब उजाला रहा—इतना कि लोग आराम से अखबार पढ़ सकें।

दुर्भाग्य से रूस में हुई घटनाओं के कारण १९ वर्ष तक इस विस्फोट की वैज्ञानिक जांच-पड़ताल नहीं हो सकी। १९२७ में वैज्ञानिक अभियान द्वारा खोजबीन शुरू हुई। इस विस्फोट के अनेक कारण सुझाये गये हैं, लेकिन सबसे अधिक उपयुक्त लगता है एक छोटे धूमकेतु की पृथ्वी से टक्कर। लेकिन ऐसी टक्कर की संभावना दो हजार साल में एक बार की है और वह भी एक स्थान विशेष तक ही सीमित रहेगी। इसलिये टक्कर के खतरे के कारण नींद गंवाने की जरूरत नहीं है।

कभी-कभार हमारे आकाश में अपनी रेशमी पूंछ फैलाने वाले इन धूमकेतुओं का रहस्य सचमुच गहरा है। इसलिये तो १९८५-८६ के मशहूर मेहमान हेली धूमकेतु की खातिर-तवज्जो की पूरी तैयारियां की गई हैं।

१५-१६ अक्टूबर १९८२ की रात अमरीका के खगोलशास्त्रियों ने हेली की वापसी का पहला-पहला नजारा देखा। उसके बाद से सारी दुनिया के खगोलशास्त्रियों ने गणनाएं करके यह पता लगा लिया है कि हेली धूमकेतु कब, कहां नजर आयेगा।

हेली-दर्शन की खास तारीखें

तीन तारीखें महत्वपूर्ण हैं। २७ नवम्बर १९८५—जब वह सूर्य की तरफ जाते हुये पृथ्वी के पास आया। ९ फरवरी १९८६ —जब वह पेरिहीलियन में होगा, यानी सूर्य के सबसे पास होगा। ११ अप्रैल १९८६ —जब वह सूर्य से दूर जाते हुये फिर एक बार पृथ्वी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

के पास आयेगा। ११ अप्रैल १९८६ को इस यात्रा में पृथ्वी से उसकी दूरी कम होगी। इसके बाद धूमकेतु धुंधला होता जायेगा और हौले-हौले अन्तरिक्ष की वीरानियों में खो जायेगा।

धूमकेतु की चमक सूर्य की स्थिति पर निर्भर करेगी। अगस्त १९८५ में वह सूर्योदय से पहले के लाल आकाश में जगमगाने लगा था। उस समय एक बड़े दूरदर्शी से उसका सिर ही देखा जा सकता था। धीरे-धीरे धूमकेतु पश्चिम की ओर बढ़ा। अक्टूबर १९८५ में उसे छोटे दूरदर्शियों से भी देखा जा सकता था। नवम्बर के महीने में शाम के वक्त दूरबीन से बहुत से लोगों ने इसका सुन्दर दृश्य देखा और क्रिसमस से कुछ पहले, गहराती रात में हेली धूमकेतु कोरी आंखों से देखा गया। जनवरी के खत्म होते-होते यह सूर्य के साथ ही उदय और अस्त हुआ। दिन की तेज रोशनी में इसे देखना सम्भव नहीं हो सका। मार्च-अप्रैल में इसकी पूंछ सबसे लम्बी दिखाई देगी। मार्च १९८६ में यह सूर्य की चमक से अलग होकर सुबह के आकाश में उभरेगा। इस वक्त हम इसे कोरी आंखों से खूब अच्छी तरह देख पायेंगे। अप्रैल के मध्य में यह सूर्योदय के समय पूर्वी क्षितिज पर गायब होकर शाम के समय पश्चिमी आकाश में उभरेगा। ११ अप्रैल १९८६ को धूमकेतु पृथ्वी के बहुत पास आ जायेगा। दक्षिणी गोलार्द्ध में रहने वालों के लिये यह एक भव्य दृश्य होगा, जबकि उत्तरी गोलार्द्ध वालों को यह क्षितिज के करीब दिखाई देगा। धीरे-धीरे धुंधला होता हुआ अप्रैल के अन्त में यह दूर चला जायेगा—

हेली धूमकेतु इस बार पृथ्वी और अपनी कक्षा की पेचीदगियों के कारण अब तक की सभी यात्राओं में सबसे कम चमकीला दिखाई देगा। १९१० की अपनी यात्रा की अपेक्षा इस बार वह पृथ्वी से ११ गुना अधिक दूरी पर होगा। फिर भी पृथ्वी के लगभग हर भाग से इसे देखा जा सकेगा। ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका और दक्षिण अमरीका से इसे बहुत अच्छी तरह देखा जा सकेगा।

हेली धूमकेतु का नाम सत्रहवीं सदी के खगोलशास्त्री एडमंड हेली के नाम रखा गया है, जिन्होंने धूमकेतु निरीक्षणों के पुराने दस्तावेजों का अध्ययन कर विभिन्न धूमकेतुओं की कक्षाओं की गणना की। उन्होंने पाया कि अनेक धूमकेतुओं की कक्षाएं एक समान हैं और फिर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि १४५६, १५३१, १६०७, १६८२ में दिखाई पड़े धूमकेतु अलग-अलग नहीं, एक ही धूमकेतु है, जो हर ७५-७६ साल में पृथ्वी का दौरा करता है। इसी निष्कर्ष के आधार पर उन्होंने भविष्यवाणी की कि १७५८ के अन्तिम दिनों में यह धूमकेतु फिर एक बार लौटेगा। ८६ वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु के सोलह वर्ष बाद दिसम्बर १७५८ में सचमुच यह धूमकेतु लौटा और तभी से इसे हेली धूमकेतु कहा जाने लगा।

हेली धूमकेतु के बारे में सबसे प्रथम सूचना २४० वर्ष ईसा पूर्व चीनी दस्तावेजों में दर्ज है। यह १०६६ में पृथ्वी के करीब आया था, जब विजेता विलियम ने फ्रांस के नारमंडी से इंग्लैंड में घुसपैठ की थी। हेली धूमकेतु इंग्लैंड के राजा हेरल्ड के लिये अपशगुन माना गया और उस वर्ष हेस्टिंग्स की लड़ाई में हेरल्ड की मृत्यु हो गयी। इस युद्ध का चित्रण करने वाली बेयू टैपेस्ट्री में हेली धूमकेतु को भी स्थान दिया गया है। १३०१ में इसकी वापसी को कलाकार ज्योत्तो ने अपने नेटिविटी चित्र में चित्रित किया और बाद में हर ७५-७६ साल में इसकी वापसी ने अनेक प्रकार की कल्पनाओं, किंवदंतियों और घटनाओं को जन्म दिया।

हेली धूमकेतु के इस ऐतिहासिक महत्व के कारण ही इस बार आधुनिकतम वैज्ञानिक उपकरणों, अत्यन्त शक्तिशाली दूरदर्शियों और अन्तरिक्ष यानों-उपग्रहों से इसके निरीक्षण-अध्ययन की पुरजोर तैयारियां की गई हैं। आकाश में उभरने के बाद वापस

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हमसे दूर जाने तक लगातार इसकी नाप-खोज की जायेगी। करोड़ों बार इसका विश्लेपण किया जायेगा और शायद हर सम्भव तरीके से करोड़ों बार इसके चित्र खींचे जायेंगे। सारी दुनिया के २०० अत्यन्त शक्तिशाली दूरदर्शी एक साथ अपनी आंखें इस धूमकेतु पर टिकाये रखेंगे।

पचास देशों का अनोखा हेली-दर्शन कार्यक्रम

इस दुर्लभ ऐतिहासिक खगोलीय घटना का पूरी बारीकी से अध्ययन-विश्लेषण करने की दृष्टि से लगभग पचास देशों ने मिलकर एक 'इंटरनेशनल हेली वॉच' नामक समन्वय कार्यक्रम का आयोजन किया है। भारत भी इसमें सहभागी है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत हेली से सम्बन्धित सारे आंकड़े अमरीका की जेट प्रोपलशन लेबोरेटरी और पश्चिम जर्मनी की जुर्जेन रेमी वेधशाला को भेजे जायेंगे। दुनियां के सैकड़ों खगोलशास्त्रियों, शौकिया आकाश-दर्शियों, विश्वविद्यालयों, प्रयोगशालाओं, औद्योगिक कम्पनियों आदि के सम्मिलित प्रयासों का केन्द्रीय अभिलेखागार होगा यह 'इंटरनेशनल हेली वॉच'!

इस अध्ययन में भारत की तीन वेधशालाओं का बड़ा महत्व है—तमिलनाडु में कवलूर, उत्तर प्रदेश में नैनीताल और आंध्र प्रदेश में हैदराबाद। भारतीय हेली-दर्शन कार्यक्रम का संयोजन कर रहा है भारतीय खगोल भौतिकी संस्थान, बंगलौर। इस कार्यक्रम में शामिल हैं नैनीताल स्थित उत्तर प्रदेश सौर वेधशाला, भौतिक अनुसंधानशाला अहमदाबाद, टाटा आधारभूत अनुसंधान संस्थान बम्बई, पोजीशनल एस्ट्रोनॉमी सेंटर कलकत्ता और उदयपुर, पंजाब, दिल्ली और उस्मानिया विश्वविद्यालयों की सौर वेधशालायें।

कवलूर और नैनीताल स्थित करीब एक मीटर का परावर्ती दूरदर्शी और उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद स्थित करीब १२० सें.मी. का दूरदर्शी भारतीय धूमकेतु अवलोकन के प्रमुख उपकरण होंगे। इनके अलावा आधा दर्जन छोटे दूरदर्शी भी उपयोग किये जायेंगे। धूमकेतु की पूंछ से ढक जाने वाले रेडियो स्रोतों के अध्ययन के काम आयेगा ऊटी स्थित रेडियो दूरदर्शी। गौरीबिदनूर स्थित रेडियो दूरदर्शी डेकामीटर तरंगलंबान में धूमकेतु की जांच-पड़ताल करेगा। टाटा संस्थान हेली की तस्वीरें खींचने के लिये दूरदर्शियों से लैस बड़े-बड़े गुब्बारे ३० किलोमीटर ऊँचाई तक उड़ायेगा। इस पूरे भारतीय कार्यक्रम पर १३ लाख रुपये खर्च किये जायेंगे।

इस सरकारी प्रयास के अलावा देश भर के अनेक शौकिया खगोलशास्त्री अपने-अपने साधनों से इस सुनहरे मौके को देख-परख रहे हैं। इंटरनेशनल हेली वॉच से सहयोग कर वे इस वैज्ञानिक अभियान में अपना योगदान कर रहे हैं। सेंट जेवियर्स कॉलेज, बम्बई में संचालित शौकिया खगोलशास्त्री परिषद के सदस्य हेली धूमकेतु का अवलोकन करेंगे। इसी तरह नरोरा स्थित शौकिया खगोलशास्त्री परिषद के सदस्य वैज्ञानिक अध्ययन के अलावा सारे देश के अपने सहयोगियों के साथ मिलकर हेली धूमकेतु पर आम लोगों की प्रतिक्रिया दर्ज करेंगे।

—०—

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ग्रह गोचर-पद्धति पर नवीन विचार

गोचर-पद्धति

अवकाश प्राप्त मेजर एस. जी. खोत 'ज्योतिष-शास्त्री', 'ज्योतिष-वाचस्पति' द्वारा रचित अनुपम ग्रन्थ है। लेखक की अन्य पुस्तकें लघु-पाराशरी सिद्धांत, ज्योतिष और परिवार नियोजन (हिन्दी एवं अंग्रेजी में), सैक्स एण्ड मैरेज इन एस्ट्रोलॉजी (हिन्दी एवं अंग्रेजी में), एस्ट्रोलॉजी एण्ड साइन्स (अंग्रेजी में), भारतीय संस्कृति एवं युग प्रणाली, ज्योतिष और आध्यात्म आदि पुस्तकें इससे पहले प्रकाशित हो चुकी हैं। ज्योतिष प्रेमी सज्जनों ने इसमें से कोई न कोई पुस्तक अवश्य पढ़ी होगी और वे मेजर खोत की विद्वता ज्ञान तथा उत्तम शैली से परिचित होंगे।

प्रस्तुत पुस्तक में ग्रहों, राशियों, नक्षत्रों, भावों के बारे में प्रारम्भिक ज्ञान अंक, उनके शब्द ग्रहों के स्वामी क्षेत्र, मूल-त्रिकोण, उच्च-नीच स्थान, शत्रुता-मित्रता, तात्कालिक मैत्री, पंचधा मैत्री, शरीर के अंग में राशियों का स्थान, दृष्टि दशबल आदि का ज्ञान देकर नवग्रहों के १२ राशियों में भ्रमण करने पर किस राशि के व्यक्ति को क्या-क्या फल होते हैं? यह विस्तार से बताया गया है। नाम के अक्षरों से राशि का ज्ञान तथा तदनुसार फल, ग्रहों का वेधयुति आदि के प्रभाव से फल, बीमारी औषधि शल्य क्रिया, आपरेशन जन्म-कुण्डली में ग्रहों की स्थिति के अनुसार प्रत्येक ग्रह का गोचर अर्थात् १२ राशियों में भ्रमण का फल। दशा अन्तरदशा के अनुसार गोचर फल में भिन्नता, राहु, केतु, हर्षल, नेपच्यून के भी गोचर फल विस्तार से बताये गये हैं। शनि के चरण, पाद, वाहन के अनुसार ढैय्या, साढ़ेसाती का फल, सभी ग्रहों का भोग तथा अन्य ग्रहों से स्थानीय भावों के अनुसार फल दिये गये हैं।

गोचर विषय पर अब तक प्रकाशित सभी पुस्तकों से अधिक जानकारी देने वाली भविष्य कथन में पूर्ण सहायक यह अनुपम पुस्तक है। इस पुस्तक का मूल्य नाम मात्र को (१) रखा गया है, जो इसकी मूल्यवान सामग्री को देखते हुए कुछ भी नहीं है।

धर्मसन प्रकाशन
नई सड़क, दिल्ली-११०००६

पृष्ठ १ से १८ तक—समार साप्ताहिक हिन्दुस्तान
पृष्ठ १९ से २४ तक—समार धर्मयुग

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आर्यभट्ट अनुसंधान केन्द्र की अनुपम एवं उत्कृष्ट भेंट

सन् १९०० ई. से २००० तक का सम्पूर्ण पंचांग

शतक मार्तण्ड

गत कई वर्षों से भारत के प्रमुख ज्योतिर्विदों द्वारा कड़े परिश्रम से तैयार किया गया उपरोक्त ग्रंथ ज्योतिष प्रेमियों के लिए अत्यन्त उपयोगी है। इसका सम्पादन कई ज्योतिष सम्बन्धी पुस्तकों के रचियता पं. लक्ष्मी नारायण शर्मा, बी. ए., प्रभाकर साहित्य-रत्न, ज्योतिष वाचस्पति ने अपनी देखरेख में बड़े सुन्दर और सुचारु ढंग से किया है।

विशेषतायें—शतक मार्तण्ड में सन् १९०० ई. से २००० तक के सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि का साप्ताहिक स्पष्ट, राहु, हर्षल, नेपच्यून, प्लूटो का मासिक स्पष्ट, वक्री-मार्गी, चन्द्रग्रहण, सूर्य ग्रहण, संक्रांति, पूर्णिमा, अमावस्या, लघुरित्त गणित, ०° से ६३° उत्तर, ०° से २५° दक्षिण अक्षांश पर प्रति ६ दिन का सूर्योदय, सूर्यास्त का समय, भारत के प्रमुख नगरों का सूर्योदय, सूर्यास्त का समय, चन्द्रमा के राशि अंशों से विंशोत्तरीय दशा का भोग्य निकालना, २९, ३०, ३१ अक्षांशों की लग्न-सारणी, भारतीय पद्धति से तिथि, वार, करण, सन्, संवत्, मास, पक्ष, नक्षत्र का ज्ञान व मान निकालना, सूर्य व चन्द्र स्पष्ट करने की सारणियां हैं।

इस अमूल्य ज्योतिष ग्रंथ की सहायता से विश्व के किसी भी स्थान का लग्न सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त जन्म-कुण्डली बनाने के लिए ज्योतिषियों को जिन बातों की आवश्यकता होती है, वे सभी इसमें उपलब्ध हैं।

बढ़िया कागज पर अति सुन्दर और सुचारु रूप से छपा यह ग्रन्थ सजिल्द कपड़े में केवल मात्र १२१) एक सौ इक्कीस रुपये, डाक व्यय पृथक् में उपलब्ध है।

आवश्यक नोट—नववर्ष के शुभ अवसर तक एक सौ एक रुपया अग्रिम भेजने पर २०) बीस रुपये की विशेष छूट दी जावेगी। स्टॉक सीमित है, ऐसा न हो यह संस्करण समाप्त होने पर आपको नये संस्करण की प्रतीक्षा करनी पड़े।

प्रकाशक :
आर्यभट्ट अनुसंधान केन्द्र (पंजीकृत)
२/८१ ए, पंजाबी बाग, नई दिल्ली-२६
दूरभाष : ५९३११८

प्राप्ति स्थान :
धर्मसन प्रकाशन
२५९६, नई सड़क, दिल्ली-६
दूरभाष : २६४९८६, २६५००६

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection